Vol. 1, Issue 8 – Nov. 2025 ISSN - 3107-4936 (Online) (Peer Reviewed)

KALAASAMIKSHA

(A Multidisciplinary Journal of Art, Literature, Culture, and Contemporary Society)

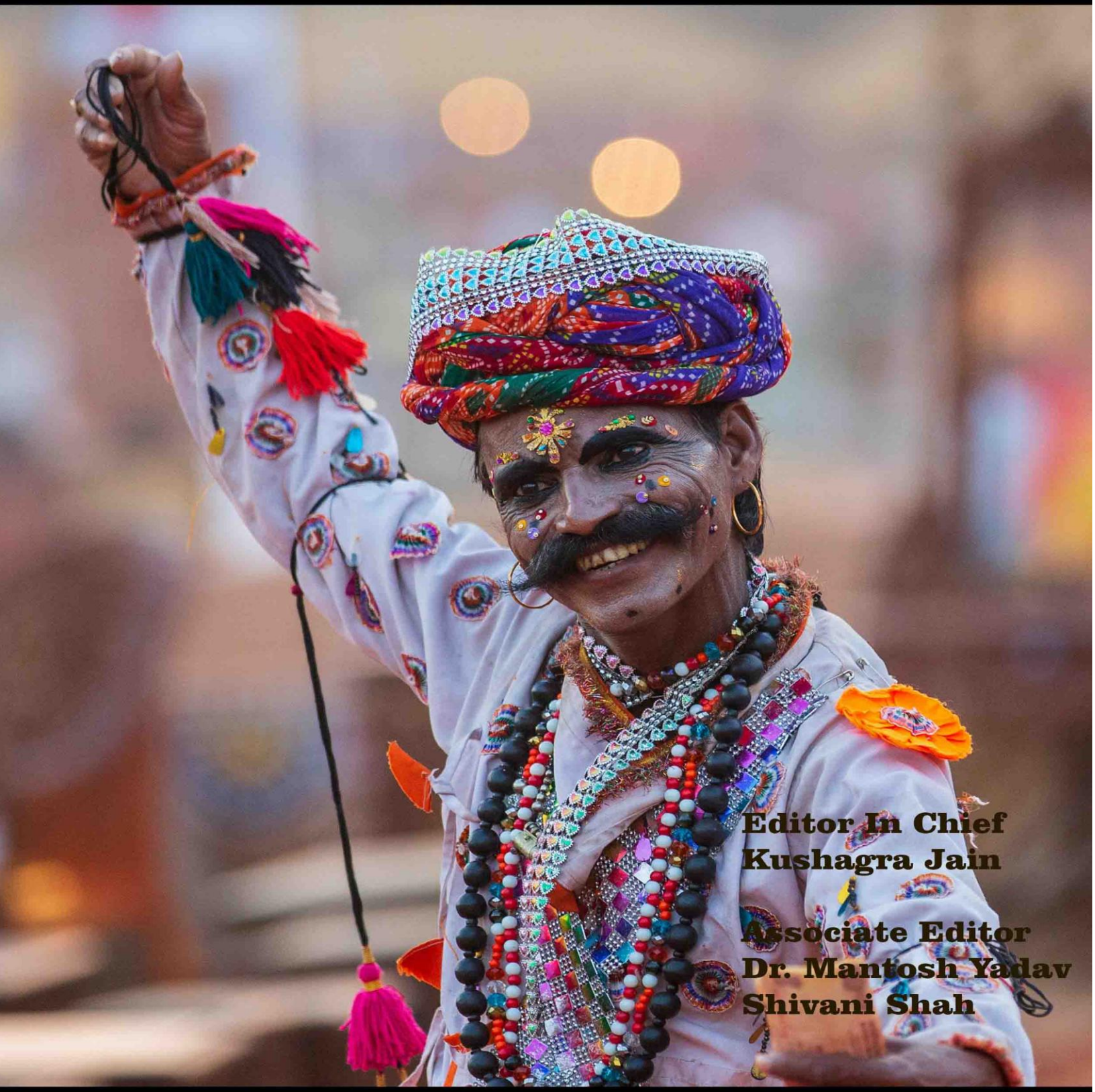

Editor In Chief
Kushagra Jain

Associate Editor
Dr. Mantosh Yadav
Shivani Shah

In Collaboration With
Shivagra Kalaamanch Foundation

KALAA SAMIKSHA

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 01, No 08, PP 273-304 Nov. 2025 (Total PP 32)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly

1. संपादकीय

अपने प्रतिष्ठित शोध-जर्नल के नवीनतम अंक को आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुए हमें अत्यंत हर्ष का अनुभव हो रहा है। यह जर्नल कला, साहित्य, संस्कृति तथा समकालीन समाज के बहुआयामी विमर्श को समर्पित है। प्रस्तुत अंक **(Volume 01, No. 08, नवम्बर 2025)** का केंद्रीय विषय भारतीय लोक एवं जनजातीय कलाओं की शाश्वत प्रासंगिकता तथा बदलते वैश्विक परिदृश्य में उनके निरंतर रूपांतरण पर केंद्रित है।

भारतीय संस्कृति अपनी विशालता, विविधता और सहिष्णुता के लिए विश्वविख्यात है। लोक एवं जनजातीय कलाएँ इसी सांस्कृतिक विरासत का जीवंत और प्रामाणिक दस्तावेज हैं। यह अंक विशेष रूप से इस तथ्य का विश्लेषण करता है कि किस प्रकार आधुनिकता, तकनीक और पर्यावरणीय चेतना ने पारंपरिक कला रूपों को प्रभावित किया है और उन्हें नए संदर्भों में पुनर्परिभाषित किया है।

लोक कला और परंपरा

इस अंक में उत्तर प्रदेश और बिहार के लोक पर्वों में निहित कलात्मक अभिप्रायों पर केंद्रित एक महत्वपूर्ण शोध शामिल है। यह अध्ययन स्पष्ट करता है कि **चौक पूरना, सांझी कला, मधुबनी, मंजूषा और टिकुली कला** जैसी लोक कलाएँ केवल सजावटी परंपराएँ नहीं हैं, बल्कि वे पीढ़ी-दर-पीढ़ी सांस्कृतिक मूल्यों, सामाजिक विश्वासों और सामूहिक स्मृति को सुरक्षित रखने का सशक्त माध्यम हैं।

डिजिटल माध्यम और वैश्विक पहुँच

एक अन्य शोधपत्र डिजिटल प्लेटफॉर्म और सोशल मीडिया की भूमिका पर प्रकाश डालता है, जो **गोंड, वारली और मीणा** जैसी जनजातीय कलाओं को भौगोलिक सीमाओं से परे वैश्विक पहचान प्रदान कर रहे हैं। इस डिजिटल हस्तक्षेप ने कलाकारों को बिचौलियों पर निर्भरता से मुक्त करते हुए उन्हें प्रत्यक्ष आर्थिक सशक्तिकरण और आत्मनिर्भरता की दिशा में अग्रसर किया है।

पर्यावरणीय दृष्टिकोण

लोक एवं जनजातीय कलाओं में निहित पर्यावरणीय चेतना इस अंक का एक प्रमुख विमर्श है। इन कलाओं में प्रकृति को केवल पृष्ठभूमि के रूप में नहीं, बल्कि एक जीवंत, सक्रिय और नैतिक संरक्षक के रूप में देखा जाता है। प्राकृतिक रंगों, जैविक सामग्रियों और सतत तकनीकों का प्रयोग यह सिद्ध करता है कि सौंदर्यबोध और पर्यावरण संरक्षण परस्पर विरोधी नहीं, बल्कि पूरक हैं।

गोंड कला में तकनीक का समावेश

एक विस्तृत अध्ययन पारंपरिक गोंड कला में आधुनिक तकनीक के समावेश का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। आज कलाकार एक्रेलिक रंगों, कैनवास और डिजिटल माध्यमों का प्रयोग कर रहे हैं, जिससे कला की टिकाऊ क्षमता बढ़ी है और उसे राष्ट्रीय तथा अंतरराष्ट्रीय स्तर पर व्यापक पहचान मिली है। यह नवाचार पारंपरिक आकृतियों, रंगों और कथात्मक शैली को बनाए रखते हुए कला को नए रूप में प्रस्तुत करता है।

यह स्पष्ट है कि डिजिटल माध्यम आज जनजातीय कला के लिए केवल प्रचार का साधन नहीं, बल्कि **सांस्कृतिक पुनर्जागरण का प्रभावी माध्यम** बन चुके हैं। परंपरा और आधुनिकता का यह सृजनात्मक संगम एक सशक्त सांस्कृतिक सेतु का निर्माण कर रहा है, जो हमारी अमूल्य विरासत को आने वाली पीढ़ियों तक सुरक्षित, सजीव और समृद्ध रूप में पहुँचाने में सहायक सिद्ध होगा।

अंत में, हम सभी लेखकों, शोधार्थियों, समीक्षकों और पाठकों के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं, जिनके सहयोग और बौद्धिक योगदान से यह अंक संभव हो सका।

शुभकामनाएं,

कुशाग्र जैन
प्रधान संपादक

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 01, No 08, PP 273-304 Nov. 2025 (Total PP 32)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly

2. TABLE OF CONTENTS

1. Artistic motifs in the folk festivals of Uttar Pradesh and Bihar (***उत्तर प्रदेश एवं बिहार के लोक पर्वों में कलागत अभिप्राय***)..... 273
2. Spreading tribal art on digital platforms: Global reach of tribal art through social media and websites ***डिजिटल प्लेटफॉर्म पर आदिवासी कला का प्रसार सोशल मीडिया और वेबसाइटों के माध्यम से जनजातीय कला की वैश्विक पहुँच***..... 283
3. Folk and tribal arts and literature steeped in Indian tradition (***भारतीय परम्परा से आवृत्त लोक एवं जनजातीय कलाएं और साहित्य)*** 289
4. Environmental perspectives in folk and tribal arts: A cultural and aesthetic study (***लोक एवं जनजातीय कलाओं में पर्यावरणीय दृष्टि: एक सांस्कृतिक एवं सौंदर्यात्मक अध्ययन)*** 295
5. Incorporating modern technology into traditional Gond art and cultural expression (***पारंपरिक गोंड कला में आधुनिक तकनीक का समावेश एवं सांस्कृतिक अभिव्यक्ति***) 299

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 01, No 08, PP 273-304 Nov. 2025 (Total PP 32)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly

1. ARTISTIC MOTIFS IN THE FOLK FESTIVALS OF UTTAR PRADESH AND BIHAR (उत्तर प्रदेश एवं बिहार के लोक पर्वों में कलागत अभिप्राय)

Diksha Singh[a]*

[a] *Research Scholar, Department of Visual Arts, University of Allahabad, Prayagraj, Uttar Pradesh*

[a]*Email:* diyaartist1994@ gmail.com

Abstract

Indian culture is one of the oldest and richest cultures in the world. Cultural diversity plays a major role in its richness. The major states of North India, Bihar and Uttar Pradesh, hold a prominent place in preserving and promoting cultural values and heritage such as traditions, beliefs, and ideas. The art of this region has incorporated other modern cultural attributes while never abandoning its fundamental essence. Indian folk arts are a pictorial history of the religious sentiments of the entire society, known as the intangible cultural heritage of humanity. Art has always been an integral part of Indian culture and tradition. Culture finds its expression through art.

The land of Uttar Pradesh and Bihar has been renowned since ancient times for taking art, painting, and cultural heritage to its zenith. The folk arts of this region serve as an ideal mirror not only for India but for the entire world, which other art forms emulate. Chowk Purna and Sanjhi art of Uttar Pradesh, and Madhubani, Manjusha, and Tikuli art of Bihar, continue to keep Indian tradition and culture alive even today. The folk festivals celebrated in these regions include Ram Navami, Holi, Raksha Bandhan, Dussehra, Diwali, Nag Panchami, Chhath Puja, Makar Sankranti, and Govardhan Puja, during which the women of the household, with immense devotion, create exquisite artworks for decorating their homes. These creations are an expression of their inner selves and a reflection of society. This decoration is known as the folk art of the region. Folk arts are primarily associated with rural areas, where the true aesthetic essence of these arts can be witnessed. Such a powerful manifestation is rarely seen in urban life. In folk art, certain artistic elements such as symbols, ornaments, geometric motifs, and human figures are depicted during festivals and weddings, each having its own specific religious significance. These art forms are playing a crucial role in preserving and promoting the culture and traditions of the region from generation to generation. Through these arts, various dimensions of the culture and civilization of that place are reflected.

भारतीय संस्कृति विश्व की सर्वाधिक प्राचीनतम् एवं समृद्ध संस्कृति है। यहां की समृद्ध संस्कृति में सांस्कृतिक विविधता का प्रमुख योगदान है। उत्तर भारत के प्रमुख राज्य बिहार तथा उत्तरप्रदेश परंपराओं, आस्थाओं, मान्यताओं, और विचारों जैसे सांस्कृतिक मूल्यों एवं विरासत को आगे बढ़ाने में प्रमुख स्थान रखते हैं। यहाँ की कला ने आधुनिकता के अन्य सांस्कृतिक गुणों को अपने में समाहित किया, साथ ही अपने अस्तित्व के मूल दामन को भी कभी नहीं छोड़ा। भारतीय लोककलाएं संपूर्ण समाज की धार्मिक भावनाओं का चित्रित इतिहास है, जो मानवता की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत के रूप में जानी जाती हैं। कला सदैव ही भारतीय संस्कृति एवं परंपरा की सहचारी रही हैं। कला के माध्यम से ही संस्कृति को अभिव्यक्ति मिलती है।

उत्तर प्रदेश एवं बिहार की धरती प्राचीन काल से ही कला, चित्रकला तथा सांस्कृतिक विरासत को शीर्ष बिंदु तक पहुंचाने के लिए प्रसिद्ध रही है। यहां की लोक कलाएं भारत ही नहीं अपितु संपूर्ण विश्व के समक्ष एक आदर्श दर्पण हैं, जिसको अन्य कलाएं भी आदर्श मानकर अनुसरण करती हैं। उत्तर प्रदेश की चौक पूरना, सांझी कला तथा बिहार की मधुबनी, मंजूषा एवं टिकुली कला आज वर्तमान में भी भारतीय परंपरा एवं संस्कृति को जीवित रखे हुए हैं। इन क्षेत्रों में प्रचलित लोक पर्वों में रामनवमी, होली, रक्षाबंधन, दशहरा, दीपावली, नाग पंचमी, छठ पूजा, मकर संक्रांति, गोवर्धनपूजा आदि सम्मिलित है, जिसमें घर की महिलाएं प्रमुखता से संपूर्ण आस्था के साथ घर की साज-सज्जा के लिए उत्कृष्ट कलाकृतियों का निर्माण करती हैं, यह कृतियां उनके अंतर्मन की अभिव्यक्ति हैं, जो समाज का प्रतिबिंब है। यही सजावट वहां की लोक कला के नाम से जानी जाती हैं। लोक कलाएं प्रमुख रूप से ग्रामीण अंचलों से अधिक संबंधित है, यहाँ इन कलाओं के मूल सौंदर्यात्मक प्राण को देखा जा सकता है। जिसका इतना प्रभावशाली दर्शन शहरी जीवन में अपवाद मात्र है। लोक कला में पर्व तथा शादी-विवाह में कुछ कलात्मक तत्वों जैसे प्रतीक, अलंकरणों, ज्यामिति अभिप्राय एवं मानवाकृतियों का अंकन किया जाता है, इसका अपना एक विशिष्ट धार्मिक महत्व है। यह कलाएं पीढ़ी दर पीढ़ी वहां की संस्कृति एवं परंपरा को आगे बढ़ाने के साथ-

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 01, No 08, PP 273-304 Nov. 2025 (Total PP 32)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
साथ संस्कृति को सुरक्षित रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। इन कलाओं के माध्यम से उस स्थान की संस्कृति एवं सभ्यता के विविध आयाम परिलक्षित होते हैं।

Keywords: Folk festivals, folk art, folk arts of Uttar Pradesh and Bihar, artistic motifs
लोक पर्व, लोक कला, उ0प्र0 एवं बिहार की लोक कलाएं, कलात्मक अभिप्राय

---

* Corresponding author.

प्रस्तावना

भारत की संस्कृति एवं परंपरा प्राचीन काल से ही अत्यंत गौरवशाली एवं समृद्ध रही है प्राचीन काल से ही यहाँ की सभ्यता, संस्कृति एवं इसकी समृद्ध परंपरा किसी भी एक धर्म, जाति, समुदाय, संप्रदाय, संस्कृति एवं परंपरा के बंधन में नहीं बंधी। प्रागैतिहासिक मानव ने अपनी गूढ़ भावनाओं को अत्यंत सहज रूप में व्यक्त करने के साधन के रूप में प्रतीक चिन्हों का अंकन करना प्रारंभ किया। इन्हीं प्रतिकों को भाषा का माध्यम बनाकर अपने विचारों तथा भावों का आदान-प्रदान करने लगे। इसी के बढ़ते क्रम में शुभ अवसरों, यातुक क्रिया एवं अनुष्ठानों के अवसर पर मानव पशु, धनुषधारी, वेशधारी, जैसी मानवाकृतियों का भी अंकन किया गया। इस प्रकार प्रारंभ में मनुष्य ने अपनी तत्कालीन जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्रतीक चिन्ह या चित्रों का अंकन किया परंतु निरंतर विकासक्रम में इसमें बढ़ोतरी हुई परिणामस्वरूप उनके स्वरूप में भी सौंदर्यात्मकता प्रस्फुटित हुई। माँ के गर्भावस्था से ही बच्चे के संस्कार प्रारम्भ हो जाते हैं, और मनुष्य के मृत्यु के पश्चात तक ये चलते हैं। इन सोलह संस्कारों का हिन्दू धर्म में बहुत महत्त्व हैं। इन संस्कारों के अवसर पर भी लोक कलाओं का निर्माण किया जाता हैं। प्रायः हम सभी अपने गांव, मोहल्ले तथा परिवार में ऐसे छोटे-बड़े पर्वों को देखते हैं, और उसमें प्रतिभाग भी लेते हैं, क्योंकि इसमें हमें पूर्ण श्रद्धा और विश्वास के साथ-साथ आनंद की भी प्राप्ति होती है। हम जिस समाज में रहते हैं, वहां के खान-पान, रहन-सहन, वातावरण का प्रभाव हमारी कला तथा संस्कृति पर पड़ता है। हम उससे बहुत कुछ ग्रहण करते हैं, जो हमारी सभ्यता, संस्कृति और परंपरा में परिलक्षित होते है। जैसा की हम सभी जानते हैं, हिंदू धर्म में दिन, तिथि, तथा मास का विशेष महत्व है विशेष तिथि में महिलाएं अनुष्ठान, व्रत इत्यादि पूर्ण श्रद्धा से करती हैं।

आज वर्तमान में मानव समाज अनेक प्रकार के पर्व, व्रत, तथा अनुष्ठानों का आयोजन करता है जिसमें वहां के सामाजिक, सांस्कृतिक तथा धार्मिक जीवन से प्रभावित तथ्यों तथा परंपराओं, आस्थाओं से प्रभावित होकर कुछ चिन्हों, अलंकरणों, चित्रों, मानवाकृतियां, हाथ के थापों तथा चौक आदि का अंकन करता है जो पारंपरिकता के साथ ही समकालीन समाज का भी दर्पण होता है।

लोक पर्व- हिंदू धर्म में विविध प्रकार के पर्व परंपरागत रूप से मनाए जाते हैं। जिसका पालन पीढ़ी दर पीढ़ी होता चला आ रहा है। ये पर्व व्यस्त एवं नीरस जीवन में उमंग एवं उत्साह के रंग बिखरते हैं। लोगों की इन पर्व, पूजा, व्रत एवं अनुष्ठान में असीम आस्था तथा विश्वास निहित है, इसीलिए मानव समाज इनका पूर्ण श्रद्धा से पालन कर संचारित एवं प्रसारित करता है।

उत्तर प्रदेश एवं बिहार के प्रमुख त्योहारों में रामनवमी, नाग पंचमी, रक्षाबंधन, तीज, दशहरा, विजयदशमी, करवा चौथ, अहोई अष्टमी, दीपावली, गोवर्धन पूजा, भाईदूज, आंवलानवमी व्रत, देवोठान एकादशी, बसंत पंचमी, होली, छठपूजा आदि आते हैं इन त्योहारों के अतिरिक्त शादी विवाह, जन्म संस्कार और अन्य मांगलिक अवसरों को समाज में बड़े उत्साह से मनाया जाता है। इन अनुष्ठानिक एवं मांगलिक पर्वो में विभिन्न प्रकार की लोक कलाएं बनाई जाती है ये लोक कलाएं भूमि तथा भित्ती पर बनाई जाती हैं, ये अनुष्ठानिक लोक कला के अंतर्गत आते हैं। इसके अंतर्गत विभिन्न पर्व, उत्सव, व्रत, पूजन, अनुष्ठान, तिथि एवं त्योहार पर बनाए जाने वाले आलेखन आते हैं। विष्णु धर्मोत्तर पुराण में कला के जिन स्वरूपों की चर्चा की गई है, उनमें यहां धूलि चित्र के अंतर्गत सम्मिलित है।

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 01, No 08, PP 273-304 Nov. 2025 (Total PP 32)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly

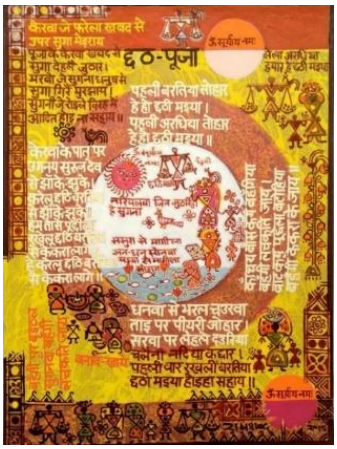

छठ- पूजा

दीपावली

रक्षाबंधन

लोक कला– लोक कला दो शब्दों से मिलकर बना है, जिसमें लोक शब्द का प्रयोग प्राचीन काल से ही 'जन' के संदर्भ में हुआ है। ऋग्वेद में पुरुष सूक्त में जन शब्द का प्रयोग लोक व्यवहार में किया गया है। पाणिनि ने अष्टाध्यायी में भी लोक शब्द का उल्लेख किया है। गीता में भी वेद के साथ लोक के महत्व को प्रतिष्ठित किया गया है। इस प्रकार लोक शब्द जाति, वर्ण, वर्ग, धर्म, संप्रदाय, नगर, ग्राम, शिक्षित-अशिक्षित, धनी-निर्धन के दोष भेदों से बहुत ऊपर है। लोक का कृतित्व संपूर्ण मानव के अभ्युदय के लिए होता हैं। प्रसिद्ध समाजशास्त्री **डॉ. बार्कर** ने अपने पुस्तक **द स्टडी ऑफ ओरिएंटल फोकलोर** में लोक शब्द की व्याख्या कुछ इस प्रकार की हैं, "आधुनिक सभ्यता से अलग रहने वाले संपूर्ण जाति या समाज ही लोक हैं एवं इस लोक द्वारा विरचित या निर्मित कला ही लोक कला है।" लोक कला का अर्थ लोकमानस या जनजीवन की अभिव्यक्ति से है विद्वानों ने लोक कला को कुछ इस प्रकार परिभाषित किया है-

प्रो. C. L.झा- "लोक कला मानवीय भावनाओं के साथ-साथ चली आ रही है जो अति प्राचीन है"।

लेनिन- कला जन की संपत्ति है, उसकी जडें समाज के अंदर तक पहुंचनी चाहिए। वह जन के लिए बोधगम्य और प्रिय होनी चाहिए।

रामचंद्र शुक्ल- लोक कला धर्म की एक इकाई है जिसे व्यक्ति अपनी धार्मिक भावनाओं को व्यक्त करने में प्रयोग में लाते हैं।

लोक कला के विषय असीमित है, इसमें सौंदर्य प्रसाधानात्मक एवं व्यावहारिक लोकाभिव्यक्ति के स्वरूप आते हैं जिन्हें मुख्यतः चार भागों में बांटा जा सकता है- **आंगिक, वाचिक, निर्मित, अभिनेय।** आंगिक अभिव्यक्ति में भित्तिचित्र, रंगोली, अल्पना, ऐपन, चौक पूरना, मेहंदी लगाना गोदना, वस्त्र छपाई एवं उत्सवों पर अंकित किए जाने वाले विभिन्न आकृतियां सम्मिलित हैं। वाचिक के अंतर्गत लोक संगीत एवं परंपरागत लोक साहित्य आते हैं। निर्मित में खिलौने, काष्ठशिल्प, गृहसजा आदि उल्लेखनीय है। और अभिनय के अंतर्गत लोकनाट्य एवं लोक नृत्य मुख्य रूप से आते हैं।

लोक चित्रकला को निम्न भागों में वर्गीकरण द्वारा समझा जा सकता है-

- **लिखने की कला-** लोक चित्रकला में लिखने का तात्पर्य चित्रांकन से है, इसमें विवाह और त्योहारों के अवसर पर कच्ची भित्तियों को गोबर तथा मिट्टी से लीपकर उसके ऊपर गेरू, हल्दी, पीली मिट्टी, काली मिट्टी, चूने आदि के माध्यम से चित्रांकन करते हैं, जिसे लिखने की कला के नाम से परिभाषित किया जाता है।
- **चीतने की कला-** चीतने का अर्थ है गढ़े पदार्थ अर्थात् गोबर, मिट्टी, भूसी आदि के माध्यम से चित्रांकन करना। मुख्यतः यह चित्र कच्चे घरों की भित्तियों पर बनाए जाते हैं। कहीं- कहीं विशेष अवसर एवं विवाह में घड़े तथा कलश पर भी इससे उभरी हुई आकृति निर्मित की जाती हैं।
- **गोदने की कला-** यह बहुत प्राचीन कला है, इसमें लोग शरीर पर विभिन्न प्रकार के अभिकल्प या अलंकरण सुई की सहायता से बनवाते हैं। विशेष रूप से ग्रामीण एवं आदिवासी जनजातियां इस सौंदर्यमूलक अलंकारिक प्रथा को अपनाए हुए हैं। यह परंपरा राजस्थान, बिहार एवं उत्तर प्रदेश तथा जनजातीय इलाकों में विशेष रूप से देखी जा सकती है।वर्तमान समय में यह टैटू कला के नाम से बहुत प्रचलित है।

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 01, No 08, PP 273-304 Nov. 2025 (Total PP 32)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly

- **चौक पूरना या भरने की कला-** चौक का तात्पर्य आंगन से है, तथा पूरना का अर्थ आंगन की भूमि पर रंगों के माध्यम से चित्र रचना करना है। इसे धूल चित्र भी कहा जाता है। त्योहार तथा विशेष अवसरों पर विभिन्न प्रकार के चौक बनाए जाते हैं। अलग-अलग स्थान में इसे अलग-अलग नाम से प्रचलन में लाया जाता है।
- **उकेरने की कला –** इसमें किसी सतह को उत्कीर्ण करके चित्र रचना करते हैं। यह सतह नर्म तथा कठोर दोनों प्रयोग में लाई जा सकती है, इसमें कच्ची मिट्टी से निर्मित मूर्तियां, घड़े, पात्र, पक्षियों, जानवरों तथा लकड़ी के पलंग, दरवाजे, चौखटे आदि पर उत्कीर्ण अलंकरण भी सम्मिलित हैं, जैसे हरितालिका तीज में कच्ची मिट्टी से शिव-पार्वती की प्रतिमा बनना इसका उत्कृष्ट उदाहरण है।

<u>उत्तरप्रदेश तथा बिहार प्रमुख लोक चित्रकलायें</u>-

सांझी – यह कला उत्तर प्रदेश के ब्रज क्षेत्र से संबंधित है। इसका निर्माण शाम के समय किया जाता है यह प्रायः भूमि तथा भित्ति को अलंकृत करने की कला है। यह मुख्यतः तीन प्रकार से बनाई जाती है- पहली भूमि पर सूखे रंगों द्वारा, दूसरी भित्ती पर गोबर आदि के द्वारा, और तीसरी पेपर कट के द्वारा व पेपर कट को फ्रेम करवा कर। प्रथम सांझी मंदिर एवं घर के चबूतरे पर सूखे रंगों जैसे चूना, चावल, कोयला, रोली, पिसी हल्दी का प्रयोग बेल-बूटे, विभिन्न अभिप्राय, फूल-पत्ती, पशु-पक्षी एवं भगवान कृष्ण की लीलाओं का चित्रण करने के लिए किया जाता है। दूसरे प्रकार में गोबर की सांझी को पितृपक्ष तथा नवरात्रि के अवसर पर बनाया जाता है, इसमें भित्तियों पर गाय के गोबर, रंगीन पन्नी, फूल पत्ती, मिट्टी के रंगे हुए विभिन्न आकारों एवं सजावटी वस्तु का प्रयोग सांझी माता के अंकन में किया जाता है। तीसरे प्रकार की सांझी में पेपर स्टैंसिल को किसी सतह अर्थात कागज या भित्ती पर रखकर ऊपर से रंग से फुहार देकर चित्र निर्मित किए जाते हैं। इस कला परंपरा को विशेष स्थान दिलाने में राम सोनी, शालिनी गोस्वामी, गोपाल लाल, आचार्य सुमित गोस्वामी, विजय सोनी, मोहन कुमार, आशुतोष वर्मा जैसे प्रमुख कलाकारों का योगदान है।

चौक पूरना- इसका उद्देश्य पूजन हेतु देवी-देवताओं का आवाहन कर उन्हें आसन प्रदान करना है। भूमि को अलंकृत करने की यह कला जो आंटे, हल्दी, रोली तथा कहीं-कहीं पर सूखे रंगों द्वारा बनाई जाती है, उसे उत्तर प्रदेश में चौक पूरना नाम से जाना जाता है। कुछ विशेष अवसरों पर ऐपन का भी प्रयोग किया जाता है जो शुभता का प्रतीक है। चौक पूरने का अंकन रीति-रिवाज, पर्व, त्योहार, धार्मिक अनुष्ठान, संस्कार आदि में विशेष रूप से होता है। अधिकांशत चौक पूजा स्थल, मंडप स्थल, अनुष्ठान स्थल, मुख्य द्वार तथा संस्कार स्थल पर बनाए जाते हैं, इनमें ज्यामितीय अभिप्रायों के साथ-साथ बीच में शुभ प्रतीक जैसे- कमल, शंख, प्रभुपाद, कलश आदि का अंकन किया जाता है। यह गोलाकार, वर्गाकार, षष्ठाकार, अष्ठाकार आदि आकारों में बनायी जाती हैं। बुंदेलखंड आंचल में इसे उरेन कहा जाता है। चौक पूरने के पश्चात इसके ऊपर कलश, देवी देवता की मूर्ति, दीपक, हवनकुंड, एवं पाटा आदि को स्थापित कर पूजन विधि संपन्न कराई जाती है चौक पूर्ण का उल्लेख लोकगीतों में मिलता है-

मुतियन चौक पुराऔ वारी सजनी,
ढिंग दै आंगन लिपाऔ महाराज।

अनेक क्षेत्रों की महिलाएं घर, आंगन एवं चबूतरे को लीप- पोत कर चौक पूरना एवं कलात्मक बॉर्डर बनाने की परंपरा को आगे बढ़ा रही हैं। यह भाव लोकगीतों में इस प्रकार अभिव्यक्त होता है- **तिल के फूल, तिली के दाने, सूरज ऊबे बड़े भुनसारे।**

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 01, No 08, PP 273-304 Nov. 2025 (Total PP 32)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly

ऊर न पाये वारे सूरज, सब घर हो गऔ लिपना-पुतना।।

अरिपन- बिहार के मिथिला क्षेत्र में भू अलंकरण वाले धूल चित्र ही अरिपन कहलाते हैं। अरिपन मांगलिक अवसर, लोकोत्सव, संस्कृतिक एवं धार्मिक अवसरों पर बनाए जाते हैं, परंतु तुलसी चौरा स्थान पर नित्य रूप से भी बनाई जाती है। इसे बनाने में पिसे हुए चावल के घोल का प्रयोग किया जाता है। इस अलंकरण को प्रायः स्त्रियां एवं कन्याएं बनती हैं इसे बनाने से पूर्व जमीन को धो पोछकर या गोबर से लिप कर तैयार कर लिया जाता है। विभिन्न अवसर पर भिन्न-भिन्न नाम से अरिपन का अंकन किया जाता है, जैसे विवाह के अवसर पर अश्विने अरिपन, दशहरे पर कोसा अरिपन, नाग पंचमी पर नागफड़ अरिपन, मकर संक्रांति पर संक्रांति अरिपन, भाईदूज पर गोलाकार अरिपन, सत्यनारायण पूजा पर अष्टदल अरिपन प्रमुख है। इसमें शुभ प्रतीक के रूप में सूर्य, चंद्रमा, स्वास्तिक, पदचिन्ह, बेल-बूटे, पान, बांस, मछली, शंख, कलश, नारियल, कमल आदि का अंकन किया जाता है।

मधुबनी चित्र शैली- बिहार के मधुबनी एवं दरभंगा जिलों में शताब्दियों से अंतरराष्ट्रीय लोकप्रियता प्राप्त मधुबनी चित्रों का निर्माण हो रहा है, जिसे मिथिला लोक चित्रकला के नाम से जाना जाता है। यह शैली भित्ती पर बनाई जाती है, इसमें यहां के जनमानस की धार्मिक आस्था व विश्वास है। यह चित्रण शैली मांगलिक अवसरों एवं पारंपरिक अवसरों पर बनाई जाती है इसमें धार्मिक विषयों जैसे- शिव विवाह, राम विवाह, गौरी पूजन, सीता पुष्प वाटिका, मां काली, गणेश जी, मां दुर्गा, कृष्ण लीला एवं कोहबर आदि का अंकन बहुत ही सौंदर्य पूर्ण ढंग से किया जाता है। मधुबनी में धार्मिक विषयों के अतिरिक्त सामाजिक एवं पौराणिक विषयों पर दृश्यंकन बहुतायत रूप में देखने को मिलते हैं। मधुबनी कला शैली को राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय प्रसिद्धि दिलाने में जगदंबा देवी, सीता देवी, गंगा देवी, महा सुंदरी देवी, दुलारी देवी जैसी महिला कलाकारों का प्रमुख योगदान है।

मंजूषा शैली- यह भागलपुर बिहार की लोक चित्रकला शैली है जो मंजूषा पर बनाई जाती है। यह शैली कुंती के पौराणिक कथा से संबंधित है। जब कुंवारी कुंती ने कर्ण को जन्म दिया, तो उसने कर्ण को मंजूषा में रखकर नदी में प्रवाहित कर दिया इसी कारण इस शैली का नाम मंजूषा पड़ा। इस शैली का चित्रण स्थानीय देवी मनसा की पूजा के अवसर पर किया जाता है। इसमें मनसा देवी की चार बहनों सहित अमृत कलश, गोद घटवार, चंद्राधार आदि का अंकन किया जाता है। यह आकृति प्रधान कला है। जिसमें विषय से संबंधित पृष्ठभूमि का अंकन किया जाता है, और चटख रंगों का प्रयोग होता है। इससे संबंधित एक अन्य लोक कथा प्रचलित है, जिसमें एक व्यापारी नाग पूजा का विरोध करता है, परिणामस्वरुप उसके पुत्र बाला को सुहागरात वाले दिन नाग ने डस लिया उसकी पत्नी बिहुला ने एक मंजूषा के आकार के नाव बनाकर उसे चित्रांकित करवाया और पति के शव को उसमें रखकर नदी में प्रवाहित कर दिया और स्वयं सांपों की अधिष्ठात्री मनसा देवी की उपासना में बैठ गई, जिससे देवी प्रसन्न होकर बिहुला के पति को जीवनदान देती हैं तब से इस क्षेत्र की स्त्रियां मंजूषा सुसज्जित कर नदी में प्रवाहित करती हैं या मनसा देवी मंदिर में समर्पित करती हैं। सुहाग की रक्षा के लिए स्त्रियां इस व्रत एवं उपासना को करती हैं। मनोज पंडित, चक्रवर्ती देवी, निर्मला देवी जैसे कलाकारों ने इस क्षेत्र में विशेष कार्य किया।

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 01, No 08, PP 273-304 Nov. 2025 (Total PP 32)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly

टिकुली कला- यह बिहार के पटना से मौर्य काल में प्रारंभ हुई एक समृद्ध एवं पारंपरिक लोक कला है। उस समय स्त्रियों ने बिंदी को अपने श्रृंगार में शामिल किया। टिकुली बिंदी का एक स्थानीय शब्द है, जो स्त्रियों की सौंदर्यरूपी श्रंगार बिंदी से प्रभावित थी। शुरुआती दौर में टिकुली पर कलाकृतियों का निर्माण किया जाता था, धीरे-धीरे टिकुली कला का स्वरूप परिवर्तित होता गया। इसके विषय भगवान कृष्ण से संबंधित है। प्रारंभ में इसे कांच के गोल टुकड़ों पर बनाया जाता था। मध्यकाल में मुगलों ने इसे काफी प्रोत्साहन दिया। मुगलों के पतन के पश्चात टिकुली कला भी अपना वर्चस्व खोने लगी परंतु आजादी के पश्चात पद्मश्री उपेंद्र महारथी के सफल प्रयासों ने इस कला को पुनर्जीवित किया अपने प्रयोगों के दौरान इस पारंपरिक शैली को इन्होंने हार्डबोर्ड पर उतारा। 21वीं सदी में इस कला को कलाकार अशोक कुमार विश्वास ने विशेष ऊंचाइयों पर पहुंचा विश्वास ने इस सिद्धांत को आत्मसात कर अपनी इस कला ज्योति को अन्य कलाकारों में फैलाकर अनेको दिए प्रज्वलित किए।

इसके अतिरिक्त उत्तर प्रदेश तथा बिहार में गोदना कला, महावर लोक अभिकल्प, मेहंदी कला, उपला कला, कोहबर भित्ति चित्रण, थापा कला आदि कलाओं का प्रचलन परंपरागत रूप से किया जाता है। जिसमें यहां के जनमानस का विश्वास, आस्था एवं समर्पण है बड़े ही उत्साह एवं उमंग के साथ स्त्रियां विशेष पर्व पर बढ़-चढ़ के इन लोक परंपरागत कृतियों में हिस्सा लेते है। जिससे घर के युवा भी प्रभावित होते हैं और इस परंपरा को आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं, एवं बड़े ही सौन्दर्यात्मक रूप से अपने घर आंगन एवं मंदिर को सुसज्जित करते हैं।

कलात्मक अभिप्राय – जब हम लोक कला में कलात्मक या कालागत अभिप्राय की बात करते हैं तो कुछ बिंदु हमारे समक्ष प्रस्तुत हो जाते हैं जैसे उद्देश्य, संदेश, भावनाएं, सांस्कृतिक मूल्य और परंपराएं। जिसे कलाकार अपने चित्रों के माध्यम से अभिव्यक्त करता है, जिसके लिए वह कला के विभिन्न तत्वों और सिद्धांतों आदि का प्रयोग करता है यह मात्र केवल सौंदर्यात्मक ही नहीं होता, अपितु इनका संबंध मानव जाति के सामाजिक, पारंपरिक, धार्मिक और व्यावहारिक पक्ष को जीवंत बनाए रखने से भी होता है।

जब घर की स्त्रियां किसी त्योहा, मांगलिक अवसर, अनुष्ठानों तथा पूजन व्रत के अवसर पर किसी सौंदर्य पूर्ण चित्र कृति को सृजित करती हैं तो उसमें उनकी मनोभावनाएं भी अभिव्यक्त होती हैं। इन अवसरों पर महिलाएं तथा कन्याएं कुछ प्रतीकों, अलंकारों, चिन्हों, ज्यामिति आकारों, बेल बूटों, पशु पक्षियों तथा देवी देवताओं की आकृतियों को अंकित करती हैं जिसका संबंध सिर्फ मात्र साज- सज्जा ही ना होकर इसका उद्देश्य किसी न किसी प्रतीकात्मक मान्यताओं, आस्थाओं तथा रहस्य से जुड़ा होता है। जो इस लौकिक संसार में अलौकिक वातावरण को परिकलपित करता है तथा शुभता को बढ़ाता है, जो मानव समाज को पुनः ऊर्जावान कर मन को भक्तिभाव से भरकर आत्मबल प्रदान करता है। प्रत्येक चिन्ह का अपना एक अलग महत्व है जैसे उत्तर प्रदेश एवं बिहार क्षेत्र में विवाह के अवसर पर कोहबर कला में आदर्श दांपत्य के रूप में शिव पार्वती तथा मांगलिक प्रतीक के रूप में सूर्य, चंद्रमा, मछली, कछुआ, हाथी को आसपास चित्रित करते हैं, तथा वंश वृद्धि या जनन शक्ति के रूप में बांस, पुरइन पत्ता, पान, कमल तथा मिथुन आकृतियां आदि बनाई जाती हैं इ सके साथ ही कोहबर में कुछ पंक्तियां लिखी जाती हैं एक विवाह गीत में कोहबर में लिखे जाने का वर्णन है-

काहे क मोर बाबा काहे के खोजयला दमाद,

काहे क मोर बाबा पुतली खिलउला,

काहे क खोजला दमाद।

मैथिली अर्थात् सीता के विवाह में भी कोहबर चित्रण का वर्णन मिलता है –

कोहबरहिं आने कुअँर कुअँरी सुअसिन्ह सुख पाइकै।

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 01, No 08, PP 273-304 Nov. 2025 (Total PP 32)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly

अति प्रीति लौकिक रीति लागी करन मंगल गाइकै।।

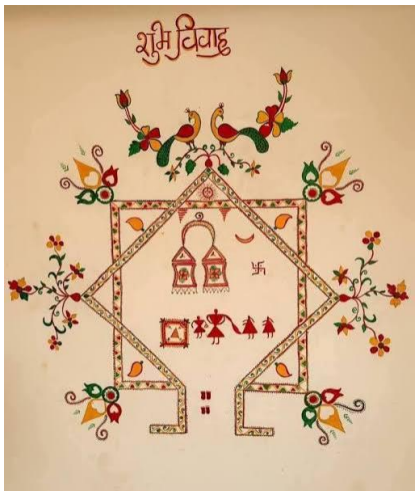

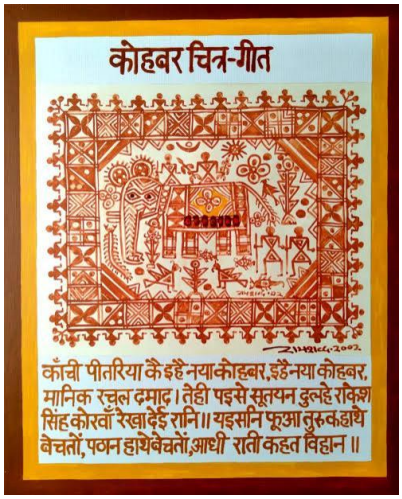

शादी विवाह के अवसर पर हाथ के थापे लगाने का भी प्रचलन बहुतायत में देखने को मिलता है। इसी प्रकार उत्तर प्रदेश के कुछ क्षेत्रों में हलछठ या ललहीछठ पर्व मनाया जाता है।जिसमें अलग-अलग क्षेत्र में अलग-अलग परंपराएं हैं- जैसे फतेहपुर तथा कानपुर क्षेत्र में घर की भित्ति पर गोबर से ज्यामिति आकारों की सहायता से हलछठ माता का चित्र बनाया जाता है तथा उस पर विभिन्न प्रकार के चित्र, आकृतियां, डोली तथा पुतले का निर्माण किया जाता है साथ ही खिलौने बनाए जाते हैं।

ठीक इसी प्रकार गोवर्धन पूजा में गोवर्धन धारी कृष्ण को गोबर से प्रतीक स्वरुप बनकर अलंकृत किया जाता है तत्पश्चात उनकी पूजा को संपन्न किया जाता है। लोक कला के कलात्मक अभिप्राय में कई पहलू देखने को मिलते हैं जैसे कुछ कलाओं का उद्देश्य धार्मिक और अनुष्ठानिक होता है तो ऐसी कला में धर्म एवं आराध्य देव से संबंधित प्रतीक, अलंकरण तथा देव एवं देवियों के मूर्त तथा अमूर्त बिम्ब बनाए जाते हैं। इसके उत्कृष्ट उदाहरण मथुरा मंदिरों में सांची कला परंपरा के रूप में प्रतिबिंबित होते हैं। कुछ लोक कलाएं सांस्कृतिक परंपरा के रूप में बनाई जाती हैं जो पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होते हैं। इसमें कुछ ऐसे बिम्ब प्रदर्शित होते हैं जो किसी समुदाय विशेष से संबंधित होते हैं। सामाजिक जागरूकता एवं शिक्षा जैसे विषयों में अक्सर मानवाधिकारों, सामाजिक

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 01, No 08, PP 273-304 Nov. 2025 (Total PP 32)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly

मुद्दों, स्वास्थ्य जैसे विषयों का अंकन होता है। जीवन मूल्य की अभिव्यक्ति से संबंधित लोक कला में जीवन के सत्य असत्य, शुभ अशुभ जैसे मूल्य को स्पष्ट रूप से निरूपित कर जन सामान्य को प्रभावित किया जाता है। व्यवहारिक या उपयोगितावादी कलाओं में मात्र सजावटी वस्तुएं ही शामिल नहीं है बल्कि इसमें दैनिक जीवन की उपयोगी वस्तुएं जैसे बर्तन, टोकरी, कपड़े आदि वस्तुएं भी सम्मिलित हैं मुख्यतः लोक कला का कलागत अभिप्राय धार्मिक ही होता है इन सभी अभिप्राय को व्यक्त करने के लिए कला के कुछ तत्वों का उपयोग किया जाता है, बिना इनके प्रभावपूर्ण प्रस्तुति संभव नहीं है। जैसे प्रतीक, ज्यामिति आकार, अलंकरण, रंग, रेखा, मानवाकृति आदि। लोक कला में सबसे महत्वपूर्ण तत्व प्रतीक होते हैं जिनके पीछे गूढ़ रहस्य निहित होता है, जो मूर्त अमूर्त किसी भी रूप मे प्रभावशाली होते हैं जो सीधे तौर पर मनुष्य को प्रभावित करते हैं बिना इनके लोक कला की कल्पना करना ठीक वैसे ही है जैसे बिना सूरज के रोशनी की प्राप्ति की कामना करना, क्योंकि बिना सूर्य के भौतिक रूप से बल्ब इत्यादि के द्वारा प्रकाश तो प्राप्त हो सकता है परंतु वास्तविक ऊर्जा एवं प्रदीप्तमान प्रकाश की कल्पना वास्तव मे असंभव हैं।

निष्कर्ष- शास्त्रों में कहा गया है-

सर्वे भवंतु सुखिनः सर्वे संतु निरामया,

सर्वे भद्राणि पश्यंतु मा कश्चित दुःखभग्वेत।

ठीक इसी तरह एक स्त्री भी अपने परिवार की मंगल कामना करती है कि उसके परिवार के प्रत्येक सदस्य स्वस्थ रहें तथा उन पर किसी भी प्रकार का कोई संकट ना आए इसीलिए स्त्रियां विभिन्न पर्वों एवं त्योहार पर ईश्वर से परिवार के लिए मंगल कामनाएं करती हैं लोक पर्वों की सफलता के लिए विभिन्न प्रकार के चौक, अलंकरण, आकृतियां, ज्यामितीय अभिकल्प प्रतीकों तथा चिन्हो को दृश्यांकित करती हैं।

उत्तर प्रदेश तथा बिहार की कला परंपरा में जो लोक चित्रकलाएं सदियों से चली आ रही हैं वर्तमान में उनके स्वरूप में कुछ परिवर्तन भी आया है जो स्वाभाविक भी है क्योंकि बदलते समय, बाजारीकरण और डिजिटलीकरण के कारण इन कलाओं को विशेष स्थान प्राप्त हुआ परंतु कहीं ना कहीं इन कलाओं ने अपनी स्वाभाविकता और वास्तविक सौंदर्य को खो दिया। उनके वास्तविक स्वरूप और सौंदर्य को हम पारंपरिक स्वरूप में ही अधिक देख पाते हैं, परंतु इस बदलाव ने इन कलाओं और कलाकारों को काफी कुछ दिया भी है। अब इन चित्रों के डिजिटल प्रिंट तथा वस्त्र अलंकरण में इन डिजाइनों को काफी सुंदर ढंग से छापा जाता है, जो वर्तमान समय में काफी पसंद भी किया जा रहा है। मधुबनी के चित्रों से सुसज्जित साड़ियां, कुर्ते आदि बाजार में उपलब्ध है। वर्तमान में सांची के स्टैंसिल को कंप्यूटर की सहायता से भी निर्मित किया जा रहा है। रंगों में भी काफी बदलाव आए हैं जो पहले खनिज तथा वानस्पतिक रंगो द्वारा बनाया जाता था अब उनके स्थान पर नए-नए प्रकार के आर्टिफिशियल रंग बाजार में उपलब्ध है।

उत्तर प्रदेश एवं बिहार के लोक पर्वों में बनाई जाने वाली लोक कलाओं का इतिहास भले ही सदियों पुराना है, परंतु उनकी मौलिकता परंपरा तथा स्वरूप में खास बदलाव नहीं आया है। आज भी लोग तीज त्योहारों को उसी भाव से मनाते हैं कुछ कलाएं जैसे थापा कला, कोहबर कला, मेहंदी कला, गोदना कला, अल्पना आदि आज भी भारत के कई हिस्सों में पारंपरिक रूप से बनाई जाती हैं।

उत्तर प्रदेश के राम शब्द सिंह, आशुतोष वर्मा, शालिनी गोस्वामी तथा बिहार की दुलारी देवी, जगदंबा देवी, सीता देवी, महा सुंदरी देवी, पुतली देवी, चिमनी देवी, शांति देवी, जमुना देवी जैसे कलाकारों ने पारंपरिक लोक कलाओं को विश्व की शीर्ष कलाओं में दर्ज कराया इस प्रकार यह सभी कलाएं हमारी मूल धरोहर हैं जिन्हें हमें भूत, वर्तमान तथा भविष्य के लिए संरक्षित करना है, क्योंकि यह हमारे जीवन को सुखमय और आनंदित करती हैं। इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि "मानव जीवन के सभी कृत्य 'शुभ' से प्रारंभ होकर 'सुख' के लिए समाप्त होते हैं।"

सन्दर्भ ग्रन्थ सूंची

- शर्मा डॉ. रीता, बिहार की कला परंपरा, नयी किताब प्रकाशन, दिल्ली, 2018
- मांगो प्राणनाथ भारत की समकालीन कला एक परिप्रेक्ष्य, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, 2023
- समकालीन कला, संपादक- डॉ.ज्योतिष जोशी, ललित कला अकादमी, अंक 46-47, 2015, ISSN 2321-1083
- गुप्त डॉ. हृदय, देशज कला, राजस्थान हिंदी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2018

- गुप्ता वंदना, पूर्वांचल के त्योहारों में प्रयुक्त कलात्मक प्रतीकों एवं चिन्हों का सौन्दर्यात्मक महत्व, ललित कला एवं संगीत विभाग, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर, 2010
- सिंह श्रीमती आंचल & तिवारी डॉ. अलका, लोक संस्कृति में लोक कला धरोहर के विभिन्न रूप, aryavart shodh vikas patrika, ISSN No.: 2347-2944,april- june- 2022
- गौतम सुरेंद्र कुमार, भारतीय लोक कला: प्राचीन काल से आधुनिक युग, International Journal of Social Science Research ISSN: 3048 - 9490 Jan-Feb 2024
- गुप्ता डॉ. अनिल & यादव प्रतिभा, लोक कला में ज्यामितीय रूप, International Journal of applied research, ISSN: 2394-7500, 2021
- पाल सप्तमी, मांगलिक अवसरों पर बनने वाली लोककला (चौक पूरना) उत्तर प्रदेश के संदर्भ में, shodhkosh: journal of visual and performing arts, ISSN- 2582-7472, jan-jun, 2023

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 01, No 08, PP 273-304 Nov. 2025 (Total PP 32)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly

2. SPREADING TRIBAL ART ON DIGITAL PLATFORMS: GLOBAL REACH OF TRIBAL ART THROUGH SOCIAL MEDIA AND WEBSITES (डिजिटल प्लेटफॉर्म पर आदिवासी कला का प्रसार सोशल मीडिया और वेबसाइटों के माध्यम से जनजातीय कला की वैश्विक पहुँच)

Ravi Kant Pandey[a]*

[a] *Assistant Professor, College Of Arts And Crafts, Lucknow*

[a] *Email: ravipandey9710@gmail.com*

Abstract

In the present era, information and communication technology has impacted almost all aspects of life. Its influence is not limited to economic or social changes but is also playing a significant role in the dissemination of cultural heritage, traditional knowledge, and folk arts. Indian tribal art, which for years has symbolized the religious beliefs, connection with nature, family traditions, and community experiences of tribal societies, is now gaining widespread recognition globally due to digital media. This research analyzes how tribal art is gaining international recognition and wider reach through social media platforms, internet-based marketplaces, and online cultural portals.

Digital media has provided tribal artists with the opportunity to present their art to the world, transcending geographical boundaries. Images of artworks, short films, glimpses of the art-making process, and personal experiences of the artists shared on social media platforms create an emotional connection with the audience. This process not only increases art sales but also generates respect and curiosity among viewers towards the art and the community. This reduces the artists' dependence on intermediaries, leading to greater transparency and independence in their income.

Following the COVID-19 pandemic, rural and tribal artists began using digital media more extensively. Many tribal painters, weavers, pottery makers, bamboo craftspeople, and folk artists posted their work on social media platforms, attracting buyers from both within India and abroad. Several news portals and cultural websites have published detailed reports on this transformation, clearly demonstrating that digital access has significantly increased artists' income. For example, the art of the Gond, Warli, and Meena communities has gained recognition outside India, and many artworks have reached international markets.

Various digital promotion strategies, such as presenting images attractively, regularly sharing content, telling stories related to the art, and establishing direct communication with the audience, have made the dissemination of art simpler and more effective. In addition, several government-run schemes and tribal development organizations are also proving helpful in connecting artists with online training, digital payment systems, and internet-based marketplaces.

In essence, this research clearly demonstrates that digital media is not merely a tool for selling art, but also strengthens cultural preservation, economic empowerment, social identity, and the continuity of traditional knowledge. Through digital technology, tribal art is now reaching every corner of the world and earning widespread respect for its unique style, symbolism, and cultural depth. Thus, the digital world is ushering in a new era for tribal art, where tradition and modernity are coming together to create a powerful bridge for the preservation and dissemination of culture.

वर्तमान समय में सूचना तथा संप्रेषण तकनीक ने जीवन के लगभग सभी क्षेत्रों को प्रभावित किया है। इसका प्रभाव केवल आर्थिक या सामाजिक परिवर्तन तक सीमित नहीं है बल्कि यह सांस्कृतिक विरासतए पारंपरिक ज्ञान और लोक कलाओं के प्रसार में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। भारत की आदिवासी कलाए जो वर्षों से जनजातीय समाज की धार्मिक आस्थाओं, प्राकृतिक संबंधों, पारिवारिक परंपराओं और सामुदायिक अनुभवों का प्रतीक रही है। अब डिजिटल माध्यमों के कारण वैश्विक स्तर पर व्यापक रूप से पहचानी जा रही है। यह शोध इस बात का विश्लेषण करता है कि किस प्रकार सामाजिक मंचों, इंटरनेट आधारित बाज़ारों और ऑनलाइन सांस्कृतिक पोर्टलों के द्वारा आदिवासी कला को अंतरराष्ट्रीय पहचान और व्यापक पहुँच प्राप्त हो रही है।

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 01, No 08, PP 273-304 Nov. 2025 (Total PP 32)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly

डिजिटल माध्यमों ने आदिवासी कलाकारों को भौगोलिक सीमाओं से परे जाकर अपनी कला को विश्व के समक्ष प्रस्तुत करने का अवसर प्रदान किया है। सामाजिक मंचों पर साझा की जाने वाली कलाकृतियों की तस्वीरें, लघु चलचित्र, कला.निर्माण की झलकियाँ, तथा कलाकारों के व्यक्तिगत अनुभव दर्शकों के साथ एक भावनात्मक संबंध स्थापित करते हैं। यह प्रक्रिया न केवल कला की बिक्री को बढ़ाती है बल्कि दर्शकों में उस कला और समुदाय के प्रति सम्मान और जिज्ञासा भी उत्पन्न करती है। इससे कलाकारों को बिचौलियों पर निर्भर रहने की आवश्यकता कम हो जाती हैए जिससे उनकी आय में पारदर्शिता तथा स्वतंत्रता आती है।

कोविड महामारी के बाद ग्रामीण और जनजातीय कलाकारों ने डिजिटल माध्यमों का अधिक प्रयोग शुरू किया। अनेक आदिवासी चित्रकार, बुनकर, मिट्टी शिल्पकारए, बाँस शिल्पकार और लोक चित्रकारों ने अपने कार्यों को सामाजिक मंचों पर डाला जिससे उन्हें देश.विदेश से खरीदार मिलने लगे। कई समाचार पोर्टलों और सांस्कृतिक वेबसाइटों ने इस परिवर्तन पर विस्तृत रिपोर्टें प्रस्तुत की हैं जिनमें यह स्पष्ट हुआ कि डिजिटल पहुँच ने कलाकारों की आय में उल्लेखनीय वृद्धि की है। उदाहरण के रूप मेंए गोंड, वारली, तथा मीणा, समुदायों की कला को देश के बाहर भी पहचान मिली और कई कलाकृतियाँ विदेशों तक पहुँचीं।

डिजिटल प्रचार की अनेक रणनीतियों जैसे चित्रों को आकर्षक रूप में प्रस्तुत करना नियमित रूप से सामग्री साझा करना, कला से जुड़ी कहानी बताना तथा दर्शकों से प्रत्यक्ष संवाद स्थापित करना ने कला के प्रसार को सरल और प्रभावी बनाया है। इसके साथ ही सरकार द्वारा संचालित कई योजनाएँ और जनजातीय विकास संस्थाएँ भी कलाकारों को ऑनलाइन प्रशिक्षण, डिजिटल भुगतान प्रणाली तथा इंटरनेट आधारित बाज़ार से जोड़ने में सहायक सिद्ध हो रही हैं।

सार रूप में यह शोध स्पष्ट करता है कि डिजिटल माध्यम केवल कला बेचने का साधन नहीं है बल्कि यह सांस्कृतिक संरक्षण, आर्थिक सशक्तिकरण, सामाजिक पहचान और पारंपरिक ज्ञान की निरंतरता को भी मजबूती प्रदान करता है। डिजिटल तकनीक के माध्यम से आदिवासी कला आज विश्व के कोने.कोने तक पहुँच रही है और अपनी विशिष्ट शैली प्रतीकात्मकता तथा सांस्कृतिक गहराई के कारण व्यापक सम्मान अर्जित कर रही है। इस प्रकारए डिजिटल संसार जनजातीय कला के लिए एक नया युग प्रस्तुत कर रहा हैए जहाँ परंपरा और आधुनिकता मिलकर संस्कृति के संरक्षण और प्रसार का सशक्त सेतु निर्मित कर रहे हैं।

Keywords: Digital platforms, tribal art, social media, cultural identity, global reach

डिजिटल प्लेटफॉर्म, आदिवासी कला, सोशल मीडिया, सांस्कृतिक पहचान, वैश्विक पहुँच

---

* Corresponding author.

परिचय (Introduction)

भारत एक बहु.सांस्कृतिक बहुभाषीय और बहु.परंपरागत देश है, जहाँ प्रत्येक क्षेत्र और समुदाय की अपनी विशिष्ट कला.परंपराए, जीवन.दर्शन और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति है। इन सबके बीच आदिवासी कला भारतीय सांस्कृतिक धरोहर का अत्यंत सजीव और प्राचीन रूप है। देश के विभिन्न जनजातीय समुदाय जैसे गोंड, भील, वारली, संथाल, मीणा, आदि अपने जीवन, विश्वास, प्रकृति तथा स्मृतियों को रंग- रेखा, बुनावट, आकृतियों और प्रतीकों के माध्यम से पीढ़ियों से अभिव्यक्त करते आए हैं। आदिवासी कला केवल सौंदर्यबोध का विषय नहीं बल्कि यह समुदाय की आंतरिक संवेदनाओं, सामुदायिक संरचना, श्रम.संस्कृति, धार्मिक आस्था और पर्यावरण के साथ उनके सहज संबंध का जीवंत दस्तावेज है।

परंतु सदियों तक यह कला मुख्यतः स्थानीय सीमाओं, ग्रामीण मेलों, औपचारिक प्रदर्शनियों या पर्यटन स्थलों तक ही सीमित रही। आधुनिक बाज़ार व्यवस्थाए पूँजी आधारित व्यापार तथा बिचौलियों के कारण आदिवासी कलाकारों को उचित मूल्य पहचान और ग्राहकों तक प्रत्यक्ष पहुँच प्राप्त नहीं हो पाती थी। कई बार कलाकार अपनी कृतियों के वास्तविक मूल्य से अनजान रहते थे और उनकी कला का व्यापार करने वाले बीच के लोग अधिक लाभ अर्जित करते थे। इस प्रकार कला का प्रसार सीमित रहा और कलाकारों की आर्थिक स्थिति भी स्थिर नहीं हो पाई।

इसी पृष्ठभूमि में जब डिजिटल युग ने भारतीय समाज में प्रवेश किया तो संप्रेषण की प्रकृति में व्यापक परिवर्तन आया। मोबाइल आधारित संवाद, तेज़ इंटरनेट, सामाजिक मंच, वीडियो सामग्री, डिजिटल भुगतान प्रणाली और ऑनलाइन बाज़ार जैसे साधनों ने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित किया। यह परिवर्तन कला जगत के लिए भी एक अवसर सिद्ध हुआ क्योंकि इससे कलाकारों और दर्शकों के बीच का अंतर कम हुआ और कला का प्रसार भौगोलिक सीमाओं से परे पहुँचने लगा। डिजिटल माध्यमों ने कलाकारों को स्वतंत्रता प्रदान की कि वे अपने कार्यों को स्वयं प्रस्तुत करें। उनकी कहानी बताएं, अपने मूल्य तय करें और सीधे खरीदारों से संवाद कर सकें।

विशेष रूप से आदिवासी कला के संदर्भ में डिजिटल माध्यमों ने अभूतपूर्व परिवर्तन किए। पहले जहाँ आदिवासी कलाकार केवल स्थानीय बाज़ार, सरकारी प्रदर्शनियों या कुछ चुनिंदा सांस्कृतिक आयोजनों पर निर्भर थे, आज वे सामाजिक मंचों, डिजिटल पोर्टलों तथा ऑनलाइन बाज़ारों के माध्यम से विश्व के किसी भी हिस्से में मौजूद दर्शकों तक पहुंच सकते हैं। आदिवासी कलाकारों द्वारा निर्मित चित्र, बुनाई, लकड़ी.कला, धातु.कला, मिट्टी शिल्प, बाँस शिल्प तथा आभूषण.संबंधी कार्य अब घर बैठे विश्व के कला.प्रेमियों को उपलब्ध हो रहे हैं। डिजिटल संसार ने न केवल कला को नई पहचान दी बल्कि कलाकारों के जीवन में नए आयाम भी जोड़े जैसे आर्थिक स्वतंत्रता, वैश्विक संवाद, और सांस्कृतिक आत्मविश्वास।

सामाजिक मंचों जैसे चित्र आधारित सामग्री साझा करने वाले मंच, वीडियो आधारित मंच, त्वरित संदेश मंच आदिक ने आदिवासी कलाकारों को अपनी कला को दृश्यात्मक ढंग से प्रस्तुत करने का सरल और प्रभावी अवसर दिया। कलाकार अपने कार्य की प्रत्येक चरण.प्रक्रिया, रंगों का प्रयोग, उपकरणों

की विशेषता तथा प्रतीकों के अर्थ को दर्शकों तक पहुँचा पा रहे हैं। इस प्रकार कला का अनुभव केवल वस्तु तक सीमित नहीं रह गया बल्कि निर्मिति प्रक्रिया का भी हिस्सा बन गया। इससे दर्शकों में कला के प्रति अधिक समझ और सम्मान बढ़ा है।

इसके अलावा वेबसाइटों और इंटरनेट आधारित बाज़ारों ने आदिवासी कला को व्यवस्थित व्यापारिक ढाँचा प्रदान किया। अनेक ऐसी वेबसाइटें उभरी हैं जो केवल हस्तशिल्प और जनजातीय कला पर केंद्रित हैं जहाँ कलाकार स्वयं अपना खाता बनाकर अपने उत्पाद प्रस्तुत कर सकते हैं। इस व्यवस्था में कला का मूल्य पारदर्शी रहता है और कलाकारों को बिचौलियों पर निर्भर नहीं रहना पड़ता। डिजिटल भुगतान की सुविधाएँ भी इस प्रक्रिया को सरल बनाती हैं।

सामाजिक मंचों और वेबसाइटों का एक बड़ा प्रभाव यह भी है कि उन्होंने आदिवासी कला के अध्ययन, शोध और सांस्कृतिक संवाद को नई दिशा दी है। विभिन्न विश्वविद्यालयों, शोध संस्थानों, कला परिषदों और सांस्कृतिक संगठनों ने डिजिटल माध्यम पर उपलब्ध सामग्री का उपयोग कर जनजातीय कला की विशिष्ट शैलियों, इतिहास संरक्षण और समकालीन परिवर्तनों पर नए अध्ययन आरंभ किए हैं। छात्रों, शोधकर्ताओं और कला.प्रेमियों को अब अधिक सामग्री उदाहरण और कलाकारों के प्रत्यक्ष अनुभव डिजिटल माध्यम पर उपलब्ध हैं।

डिजिटल माध्यमों के कारण आदिवासी कला को विदेशों में भी बड़ी स्वीकृति मिली है। अनेक विदेशी कला.प्रेमी संग्राहक और सांस्कृतिक संस्थाएँ भारतीय आदिवासी कला से प्रभावित हैं और वे सामाजिक मंचों तथा वेबसाइटों के माध्यम से सीधे कलाकारों से संपर्क स्थापित कर रहे हैं। इससे कलाकारों को आर्थिक लाभ के साथ.साथ अंतरराष्ट्रीय पहचान भी मिलती है। कई कलाकारों को विदेशों में कार्यशालाएँ, प्रदर्शनियाँ और सांस्कृतिक संवाद कार्यक्रमों में भाग लेने का अवसर मिला है।

इसके साथ ही यह भी सत्य है कि डिजिटल संसार ने नई चुनौतियाँ भी उत्पन्न की हैं जैसे अनुचित कॉपी, कम कीमत पर कला बेचने का दबाव, डिजिटल कौशल की कमी और इंटरनेट तक असमान पहुँच। इन सभी मुद्दों को समझना और समाधान विकसित करना आवश्यक है ताकि आदिवासी कला डिजिटल माध्यम में सुरक्षित और सम्मानजनक रूप से आगे बढ़ सके।

समग्र रूप से डिजिटल तकनीक आदिवासी कला के लिए केवल एक प्रचार मंच नहीं बल्कि सांस्कृतिक पुनर्जागरण का माध्यम बन चुकी है। इसने कलाकारों को नई आवाज़, नई पहचान और नए अवसर प्रदान किए हैं। परंपरा और आधुनिकता के इस संगम में आदिवासी कला अब विश्व के सांस्कृतिक परिदृश्य में एक महत्वपूर्ण स्थान बना रही है। यह शोध.पत्र इसी प्रक्रिया का गहन अध्ययन करेगा कि डिजिटल माध्यम कैसे आदिवासी कला के प्रसार, संरक्षण, आर्थिक विकास और वैश्विक पहचान में निर्णायक भूमिका निभा रहे हैं।

प्रेरणा एवं पृष्ठभूमि (Motivation & Background)

आदिवासी कला भारत की सांस्कृतिक आत्मा और परंपरागत ज्ञान का अत्यंत महत्वपूर्ण हिस्सा है। यह कला केवल मानव अभिव्यक्ति का रूप नहीं, बल्कि जीवन, प्रकृति, आस्था, मिथक, सामाजिक व्यवस्था और सामुदायिक समरसता का जीवंत दस्तावेज भी है। भारत की विविध जनजातियों में पाई जाने वाली कलाएँ—भील, गोंड, संथाल, वारली, सौरा, कोनकन, मीणा, कोटा, नोकते, तोडा और अनेक अन्य समुदायों की विरासत—हजारों वर्षों के सांस्कृतिक प्रवाह का परिणाम हैं। परंतु भारतीय समाज में तेजी से हुए परिवर्तन, शहरीकरण, बाजार आधारित जीवन, और आधुनिक माध्यमों के विस्तार के बीच इन कला-रूपों को वह सम्मान और स्थान लंबे समय तक नहीं मिला, जिसके वे वास्तव में पात्र थे। यही वह प्रमुख प्रेरणा है, जिसने आदिवासी कला के संरक्षण और प्रसार के प्रश्न को और अधिक महत्वपूर्ण बना दिया।

बीते दशकों में आदिवासी कला को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ा—जैसे पारंपरिक कलाओं का धीरे-धीरे समाप्त होना, युवा पीढ़ी का अन्य व्यवसायों की ओर आकर्षित होना, जंगलों और प्राकृतिक संसाधनों का क्षरण, और आर्थिक असमानता। इन परिस्थितियों में यह आशंका बढ़ने लगी कि यदि समय रहते इन कला-रूपों को सुरक्षित नहीं किया गया, तो आने वाली पीढ़ियाँ इस सांस्कृतिक धरोहर से वंचित हो जाएँगी। यह चिंता उन कलाकारों, शोधकर्ताओं, शिक्षकों और सांस्कृतिक संस्थाओं के लिए प्रेरणा का आधार बनी, जो आदिवासी कला की विरासत को पुनर्जीवित करना चाहते थे।

समय के साथ एक और महत्वपूर्ण पहलू उभरकर सामने आया—प्रौद्योगिकी का तीव्र विस्तार। डिजिटल साधनों की उपलब्धता, इंटरनेट की व्यापक पहुँच और सामाजिक मंचों की लोकप्रियता ने कला और कलाकारों के लिए अभूतपूर्व अवसर प्रदान किए। उन क्षेत्रों में, जहाँ परिवहन की सीमाएँ थीं, जहाँ बाज़ारों तक पहुँच कठिन थी, वहाँ भी डिजिटल माध्यमों ने नई दिशाएँ खोल दीं। आदिवासी कलाकार, जो पहले केवल स्थानीय मेलों, गांव स्तरीय आयोजनों या सरकारी प्रदर्शनी तक सीमित थे, अब विश्वभर के दर्शकों से सीधे जुड़ने लगे। इसी परिवर्तनशील परिदृश्य ने इस विषय के अध्ययन और शोध को प्रेरित किया।

पृष्ठभूमि का एक महत्वपूर्ण भाग यह भी है कि डिजिटल मंच केवल सूचना साझा करने का साधन नहीं रहे, बल्कि आज वे पहचान, आर्थिक सशक्तिकरण और सांस्कृतिक संरक्षण के माध्यम बन चुके हैं। आदिवासी कला, जिसे कभी “लोककला”, “हस्तकला” या “ग्रामीण परंपरा” कहकर सीमित अर्थों में

देखा जाता था, डिजिटल माध्यमों ने उसे वैश्विक कला-चर्चा का हिस्सा बना दिया। इस परिवर्तित दृष्टिकोण ने समाज में आदिवासी कला के मूल्य को पुनः स्थापित किया। न केवल देश में, बल्कि विदेशों में भी भारत की जनजातीय कलाओं के प्रति जिज्ञासा और रुचि बढ़ी।

प्रेरणा का एक और महत्त्वपूर्ण पहलू कलाकारों के जीवन से जुड़ा है। अधिकतर आदिवासी कलाकार आर्थिक रूप से कमजोर पृष्ठभूमि से आते हैं। वे कला को केवल अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं, बल्कि आजीविका का आधार भी मानते हैं। लेकिन लंबे समय तक उन्हें उचित मूल्य, बाजार तक पहुँच या कला की पहचान नहीं मिल पाती थी। डिजिटल माध्यमों के कारण इस स्थिति में सुधार हुआ है। कई कलाकारों ने कहा कि जब उन्होंने अपने चित्र, रूपांकन, दीवार चित्र, लकड़ी या धातु की वस्तुएँ डिजिटल मंचों पर साझा कीं, तो उन्हें पहले से कहीं अधिक प्रशंसा और क्रय-आदेश प्राप्त हुए। इससे कलाकारों में आत्मविश्वास और प्रेरणा का संचार हुआ।

इसके साथ-साथ शोधकर्ताओं और शिक्षाविदों के लिए भी यह विषय प्रेरक बना। आदिवासी कला का डिजिटल प्रसार केवल आर्थिक पक्ष से नहीं, सांस्कृतिक अध्ययन, कला इतिहास, सामाजिक परिवर्तन और संचार की नई संभावनाओं से भी जुड़ा है। इस प्रकार यह विषय सामाजिक विज्ञान, ललित कला, मानवशास्त्र, जनसंचार और सांस्कृतिक अध्ययन जैसे अनेक क्षेत्रों के लिए अत्यंत प्रासंगिक हो गया। पृष्ठभूमि में यह जागरूकता भी शामिल है कि कला समाज को जोड़ने, समझ बढ़ाने और विविधता को सम्मान देने का माध्यम होती है। डिजिटल मंचों पर बढ़ता संवाद, चर्चाएँ, कलाकारों की कहानियाँ, और कला की यात्रा ने इस विषय को और अधिक गहराई प्रदान की।

पृष्ठभूमि का एक और आधार यह भी है कि आदिवासी कला का वैश्विक स्तर पर प्रसार भारत की सांस्कृतिक कूटनीति को भी मजबूत करता है। जब भारत की कला विश्वभर में साझा होती है, तो अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारत की सांस्कृतिक पहचान को सुदृढ़ता मिलती है। यह केवल एक कला-रूप का प्रचार नहीं, बल्कि एक संस्कृति, एक समुदाय, और उसकी मौलिक सोच का सम्मान भी है। डिजिटल माध्यमों ने इस दिशा में यह अवसर दिया कि विश्व में बैठे व्यक्ति भी भारतीय आदिवासी कला के रंगों, प्रतीकों, मिथकों और जीवन-शैली से परिचित हो सकें।

कई सरकारी और गैर-सरकारी संस्थाओं ने भी डिजिटल मंचों के माध्यम से आदिवासी कला के संरक्षण और विकास में रुचि दिखानी शुरू की। सांस्कृतिक मंत्रालय, आदिवासी मामलों से संबंधित संगठनों, कला परिषदों और कुछ शैक्षणिक संस्थानों ने डिजिटल संग्रह, ऑनलाइन प्रदर्शनी, कला प्रशिक्षण और कलाकारों की जीवनी को संकलित करने जैसे कार्य शुरू किए। यह प्रयास कलाकारों और दर्शकों के बीच सेतु का कार्य कर रहे हैं।

प्रेरणा में यह बिंदु भी शामिल था कि डिजिटल माध्यम आने वाली पीढ़ियों के लिए ज्ञान का संग्रह बन सकते हैं। कई बार आदिवासी कला केवल मौखिक परंपरा पर आधारित होती है, जिसकी विधियाँ, रंग, प्रतीक और कथा-तत्व पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होते आए हैं। यदि इन परंपराओं का डिजिटल दस्तावेज़ीकरण नहीं होता, तो यह ज्ञान धीरे-धीरे लुप्त हो सकता था। डिजिटल रूप में संरक्षित सामग्री भविष्य के शोधार्थियों, कलाकारों और विद्यार्थियों के लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध होगी।

पृष्ठभूमि की दृष्टि से देखा जाए तो आदिवासी कला का डिजिटल प्रसार एक सांस्कृतिक परिवर्तन की प्रक्रिया है। यह परिवर्तन केवल कला को प्रदर्शित करने का माध्यम नहीं बदलता, बल्कि कलाकार और समाज के बीच संबंधों की नई व्याख्या करता है। अब कलाकार केवल दर्शकों तक पहुँच नहीं रहे, बल्कि दर्शक भी कलाकारों की संस्कृति, परंपरा और जीवन के बारे में अधिक संवेदनशील और जागरूक हो रहे हैं। यह दो-तरफा संवाद सांस्कृतिक समझ को और गहरा बनाता है।

समग्र रूप से प्रेरणा और पृष्ठभूमि इस तथ्य पर आधारित है कि आदिवासी कला मानव सभ्यता की अनमोल धरोहर है। इसे जीवित रखना, बढ़ाना और नई पीढ़ियों तक पहुँचाना आवश्यक है। डिजिटल माध्यमों ने इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए अतुलनीय अवसर प्रदान किए हैं। आधुनिक तकनीक और परंपरागत ज्ञान का यह संगम एक ऐसे भविष्य का निर्माण कर रहा है, जहाँ आदिवासी कला सीमाओं के पार, पहाड़ों और जंगलों से निकलकर विश्व के हर कोने तक अपनी अनोखी चमक, सादगी और सांस्कृतिक गहराई के साथ पहुँच रही है।

अनुसंधान पद्धति (Research Approach & Methodology)

इस अध्ययन के लिए गुणात्मक (Qualitative) और मात्रात्मक (Quantitative) दोनों विधियों का उपयोग किया गया है।

प्राथमिक डेटा स्रोत (Primary Data Sources):

इस शोध के लिए मूल डेटा का संकलन मुख्यतः डिजिटल माध्यमों के अवलोकन और विश्लेषण से किया गया। शोध का उद्देश्य यह समझना था कि सोशल मीडिया और वेबसाइटों के माध्यम से आदिवासी कला का प्रसार किस प्रकार हो रहा है और इससे कलाकारों की सामाजिक और आर्थिक स्थिति पर क्या प्रभाव पड़ा है।

मुख्य प्राथमिक डेटा स्रोत इस प्रकार रहे:

डिजिटल प्लेटफॉर्म अवलोकन (Observation of Digital Platforms)

इंस्टाग्राम, फेसबुक, यूट्यूब, एट्सी (Etsy), और "Tribes India" जैसे ऑनलाइन मंचों पर आदिवासी कला से संबंधित पेज, का व्यवस्थित अवलोकन किया गया। इससे यह समझा गया कि कलाकार अपने उत्पादों को कैसे प्रस्तुत करते हैंए कौन.सी दृश्य एवं भाषिक रणनीतियाँ अपनाते हैंए और दर्शकों की प्रतिक्रिया किस प्रकार होती है।

ऑनलाइन अभियान विश्लेषण (Analysis of Online Campaigns):

पिछले पाँच वर्षों में चलाए गए प्रमुख डिजिटल अभियानों जैसे – **#Vocal For Local**, **#Hand made In India**, और **#Tribal Art For World** का विश्लेषण किया गया। इन अभियानों ने आदिवासी कला की डिजिटल उपस्थिति और उपभोक्ता जुड़ाव को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

ई.कॉमर्स डेटा अध्ययन **(E-commerce Data Study):** Etsy, Amazon, Karigar और Government E-Marketplace (GeM) जैसे प्लेटफॉर्म्स पर उपलब्ध बिक्री आँकड़ों, उत्पादों की श्रेणियों और उपभोक्ता समीक्षा (reviews) का अध्ययन कर यह मूल्यांकन किया गया कि किन प्रकार की जनजातीय कलाएँ डिजिटल माध्यमों पर अधिक लोकप्रिय हैं।

वर्चुअल प्रदर्शनी और कला महोत्सव (Virtual Exhibitions & Art Festivals):

ऑनलाइन आयोजित प्रदर्शनियों जैसे "Tribal Craft Bazaar Online"और "Digital Art India Fair" का अवलोकन कर यह विश्लेषण किया गया कि डिजिटल प्रदर्शनियाँ कैसे कलाकारों को अंतरराष्ट्रीय दर्शकों से जोड़ती हैं।

द्वितीयक डेटा स्रोत (Secondary Data Sources):

इस शोध को सैद्धांतिक और नीतिगत आधार प्रदान करने के लिए विभिन्न विश्वसनीय द्वितीयक स्रोतों का उपयोग किया गया। इन स्रोतों ने आदिवासी कलाए डिजिटल मार्केटिंग और सांस्कृतिक सशक्तिकरण के परिप्रेक्ष्य को समृद्ध किया।

सरकारी रिपोर्टें और नीतिगत दस्तावेज़ (Government Reports and Policy Documents):

भारत सरकार के जनजातीय कार्य मंत्रालय (Ministry of Tribal Affairs) और TRIFED द्वारा प्रकाशित रिपोर्टों कृ जैसे *"Digital Empowerment of Tribal Artisans" (2022)* और *"Van Dhan Yojana Report" (2023)* – से नीतिगत ढाँचा और आँकड़े प्राप्त किए गए।

शैक्षणिक शोध एवं जर्नल लेख (Academic Research and Journal Articles): *Indian Journal of Cultural Studies*, *Art & Society Review*, और *Global Media Journal* में प्रकाशित शोध.पत्रों से डिजिटल मीडियाए संस्कृति और कारीगरी के संबंधों का सैद्धांतिक दृष्टिकोण मिला।

परिणाम एवं विश्लेषण (Results and Analysis)

सामाजिक प्रभाव

डिजिटल माध्यमों ने आदिवासी कलाकारों को आत्मगौरव और पहचान दी है। पहले जहाँ उनका काम बिचौलियों के माध्यम से बिकता थाए अब वे सीधे उपभोक्ताओं से संवाद कर रहे हैं। इससे उनके आत्मविश्वास और समाज में सम्मान की भावना में वृद्धि हुई है।

आर्थिक प्रभाव

इंटरनेट मार्केटिंग के माध्यम से आय में औसतन 40% तक वृद्धि दर्ज की गई। Etsy और Tribes India जैसे प्लेटफॉर्म से कलाकारों को अंतरराष्ट्रीय खरीदारों तक पहुँच मिली। कई महिला कलाकारों ने अपना ऑनलाइन ब्रांड स्थापित कियाए जिससे आर्थिक आत्मनिर्भरता संभव हुई।

सांस्कृतिक प्रभाव

डिजिटल मीडिया ने परंपरागत डिज़ाइनों और कहानियों को वैश्विक स्तर पर पहुँचाया। यह सांस्कृतिक संवाद का माध्यम बन गया हैए जहाँ विभिन्न देशों के लोग इन कलाओं की कहानी और प्रतीकात्मकता को समझ पा रहे हैं।

इंटरनेट कनेक्टिविटी की कमीए डिजिटल साक्षरता का अभावए और भाषाई अवरोध जैसे कारक अब भी प्रमुख चुनौतियाँ हैं। हालाँकिए कई NGO और सरकारी संस्थाएँ इस दिशा में प्रशिक्षण कार्यक्रम चला रही हैं

चर्चा (Discussion)

डिजिटल प्लेटफॉर्म ने "डिजिटल डेमोक्रेसी" का वातावरण तैयार किया है जहाँ ग्रामीण और आदिवासी कलाकार भी वैश्विक उपभोक्ताओं के साथ बराबरी के स्तर पर जुड़ सकते हैं। यह एक सामाजिक नवाचार (Social Innovation) का उत्कृष्ट उदाहरण है।

साथ ही, सोशल मीडिया पर "कहानी आधारित विज्ञापन" (Storytelling Advertisement) ने उपभोक्ताओं के भावनात्मक जुड़ाव को मजबूत किया है। कलाकार अपनी संस्कृति, परंपरा और जीवन के अनुभवों को साझा करते हुए न केवल उत्पाद बेचते हैं, बल्कि एक विचार और संस्कृति का प्रचार करते हैं।

हालांकि, इस प्रक्रिया में यह भी देखा गया कि कुछ कलाकार अपनी मौलिकता खोने लगे हैं क्योंकि वे बाजार की मांग के अनुसार कला में परिवर्तन कर रहे हैं। इसलिए सांस्कृतिक संरक्षण और व्यावसायिकता के बीच संतुलन बनाए रखना आवश्यक है।

निष्कर्ष एवं सारांश

डिजिटल प्लेटफॉर्म ने आदिवासी कला को स्थानीय सीमाओं से निकालकर विश्व पटल पर स्थापित कर दिया है। यह परिवर्तन केवल आर्थिक उन्नति का नहीं, बल्कि सांस्कृतिक संवाद और आत्मगौरव के पुनरुद्धार का भी प्रतीक है।

सोशल मीडिया ई.कॉमर्स और वेबसाइटों के माध्यम से अब आदिवासी कलाकार न केवल अपनी कला बेच रहे हैंए बल्कि अपनी कहानियाँ और पहचान भी दुनिया के सामने रख रहे हैं। डिजिटल विज्ञापन ने उन्हें वैश्विक नागरिक के रूप में स्थापित किया है।

भविष्य में यदि सरकार निजी क्षेत्र और तकनीकी संस्थान मिलकर प्रशिक्षणए डिजिटल साक्षरता और विपणन सहायता को और मज़बूत करें तो भारत की आदिवासी कलाएँ विश्व सांस्कृतिक परिदृश्य में एक सशक्त स्थान प्राप्त कर सकती हैं।

References

1. Ministry of Tribal Affairs (2025). *Tribal Art Promotion Report*, Government of India.
2. TRIFED (2021-22). *Digital Empowerment of Tribal Artisans*, New Delhi.
3. Singh, R. (2022). *Social Media and Folk Art Promotion in India.*
4. Afroj Alam[1], Nandani[2], Sakshi Sharma[3], Shruthi M[4], January 2025, Empowering Rural Artisans in India: A Digital Platform for Textiles and Handicrafts Artisans of Varanasi, | IJIRT | Volume 11 Issue 8 | ISSN: 2349-6002
5. Dr. Siddhartha Choudhury, Volume 2 | Issue 5 | May 2024, The Role of Social Media in Promoting and Preserving Indian Music and Dance Traditions, An Online Peer Reviewed / Refereed Journal
6. Joginder Singh Habbi *and Gopal Singh Habbi, Folk and tribal culture in transition: Exploring challenges and solutions, 17 September 2024, International Journal of Science and Research Archive, 2024, 13(01), 720–724
7. Ms. Geetika Vashishata & Prof. Umesh Arya, 1; June 2022. A Study of the Appropriation of Folk Art In Commercial/Advertising Communication In The Digital Age, Global Media Journal-Indian Edition
8. Trisha Ramesh Nanda, April – June 2024, Contribution Of Tribal Women In The Fields Of Education And Literature, A Global Journal Of Humanities,
9. Ira Wagh, Prof. Dr. Neelam Shukla, Sep. 2025, Empowering Tribal Women Through Cultural Entrepreneurship: A Case Study of Tribal Art in Chhattisgarh, ASHA PARAS International Journal Of Gender Studies

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 01, No 08, PP 273-304 Nov. 2025 (Total PP 32)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly

3. FOLK AND TRIBAL ARTS AND LITERATURE STEEPED IN INDIAN TRADITION (भारतीय परम्परा से आवृत्त लोक एवं जनजातीय कलाएं और साहित्य)

Kavita Yadav[a]*

[a] *Research Scholar, M.J.P. Rohilkhand University, Bareilly*

[a]*Email: kvyadav1993@gmail.com*

Abstract

Indian folk and tribal arts and literature are an integral part of India's rich cultural heritage and reflect the country's invaluable culture. These arts and literature express diverse aspects of Indian society and offer glimpses into various regional cultures. This heritage symbolizes creativity, prosperity, and social unity in villages and tribal communities. Indian folk and tribal art represents diversity and uniqueness across different regions, inspired by the country's varied geographical and cultural landscapes. This heritage includes folk music, folk tales, folk dances, folk art, and tribal arts. These forms have evolved in different regions and are a significant part of the cultural identity of the tribes residing there. Through these art forms, local history, traditions, and cultural nuances are presented. The nature of Indian folk art as a cultural heritage reflects its endless diversity, richness, and creativity, and it is considered a vibrant social and cultural legacy. Folk and tribal art reflects the integral aspects of life and culture in Indian society, expressing people's emotions, social relationships, and customs. Indian folk and tribal art preserves India's culture by incorporating various regional embellishments, costumes, songs, dances, musical instruments, dramatic performances, stories, folk tales, and other theatrical arts. It presents its ancient and social values with excellence. Through this, people understand the uniqueness of their language, literature, music, and dance, and are able to carry forward their folk traditions. In this way, Indian folk art fosters prosperity, social harmony, and cultural enrichment.

भारतीय लोककला एवं जनजातीय कलाएं एवं साहित्य भारत की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत का अहम हिस्सा है, और यह देश की अमूल्य संस्कृति को दर्शाता है। ये कलाएं और साहित्य भारतीय समाज के विविध पहलुओं को अभिव्यक्त करती है। और विभिन्न क्षेत्रीय संस्कृतियो की झलक प्रस्तुत करती है। यह विरासत गांवो और जनजातियो मे सृजनात्मकता, समृध्दि, और सामाजिक एकता का प्रतीक है। भारतीय लोक एवं जनजातीय कला विभिन्न क्षेत्रो मे विविधता और अव्दितीयता का प्रतीक है, जो देश के विविध भौगोलिक और सांस्कृतिक परिदृश्यों से प्रेरित है। इस विरासत में लोक संगीत, लोक कथाये, लोक नृत्य, लोक कलायें, और लोक वाणी जनजातीय कलायें शामिल है। ये विभिन्न क्षेत्रो मे विकसित होते है, और वहां की जनजातियों की सांस्कृतिक पहचान का महत्वपूर्ण हिस्सा है। इन रूपो मे कला के माध्यम से स्थानीय, इतिहास, परंपरायें और सांस्कृतिक अंदरूनिता को प्रस्तुत किया गया है। भारतीय लोककला सांस्कृतिक विरासत का स्वरूप उसकी अनन्त विविधता समृध्दि और रचनात्मकता को दर्शाता है, और इसे एक सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन्त विरासत के रूप में माना जाता है। लोककला एवं जनजातीय कला भारतीय समाज के जीवन और संस्कृति के अभिन्न हिस्से का प्रतिबिम्ब करती है, और लोगो की भावनाओ, सामाजिक सम्बन्धों और रूढिवादो को प्रकट करती है। भारतीय लोककला एवं जनजातीय कला मे विभिन्न प्रान्तीय अलंकरण, परिधान,गीत नृत्य, नृत्य वाद्य, नृत्य अभिनय, कथा, लोक कथायें लोककला अन्य रंगमंच की कला को शामिल करके भारत की सांस्कृति को संजोये रखती है। यह अपने प्राचीन व सामाजिक मूल्यों को उत्कृष्टता के साथ प्रस्तुत करती है, इसके माध्यम से समाज के लोग अपनी भाषा, साहित्य, संगीत और नृत्य की अव्दितीयता को समझते है, और अपनी लोक परंपराओ को आगे बढाने में सक्षम होते है। इस प्रकार भारतीय लोककला समृध्दि सामाजिक समरसता और सांस्कृतिक अभिवृद्धि का आदान-प्रदान करती है।

Keywords: Folk art, Indian identity, tribal art, literature, cultural heritage, society and rural people, tradition, the nature of heritage, etc.

लोककला, भारतीयता, जनजातीय कला, साहित्य, सांस्कृतिक विरासत, समाज व ग्रामीण जनता, परंपरा, विरासत का स्वरूप आदि ।

---

* Corresponding author.

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 01, No 08, PP 273-304 Nov. 2025 (Total PP 32)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly

प्रस्तावना

भारत को लम्बे समय से एक ऐसे स्थान के रूप मे पहचाना जाता है जहां पारंपरिक लोक कलाऐ एवं जनजातीय कलाऐ अपनी पारंपरिक शक्ति और संस्कृति का प्रदर्शन करते है। भारतीय लोक कला और आदिवासी कलाऐ अत्यंत जटिल और सरल है, फिर भी राष्ट्र की समृद्ध परंपराओ को प्रतिविम्बित करने के लिए रंगीन और जीवंत है। आम इंसान के व्दारा बिना किसी ताम झाम व प्रदर्शन से जब स्वभाविक कलाकारी को चित्र, संगीत, नृत्य, काव्य आदि के रूप में पेश किया जाता है, तो वह लोककला कहलाती है। लोककला की अवधारणा, स्पष्ट रुप से 19वीं सदी की है, जो आज भी यह कायम है, यह पूर्व औधोगिक समाज के लिए पुरानी यादों की झलक है। कलाओं का जन्म मानव जीवन के साथ जुड़ा हुआ माना जाता है, चाहे वो आदिवासी कला हो या लोक कला, ये सदैव ही मनुष्य के जीवन का एक प्रमुख अंग बनी रही है। लोककला का जन्म साहित्य के साथ हुआ है। ऐसा कहा जाता है, कि वैदिक युग की दो भाषाये एक संस्कृत जो मुख्य भाषा थी, पढ़ें- लिखे लोगो की भाषा थी, दूसरी अपभ्रंश तथा प्राकृत भाषा, जो लोक समाज मे बोली जाती थी। यही से धीरे-धीरे लोककला की शुरूआत और विकास शुरू होता है।

डा. हजारी प्रसाद व्दिवेदी - - -लोक शब्दो का अर्थ जनपद अथवा ग्राम नही है, बल्कि नगरों और गावों मे फैली हुयी व समूची जनता है, जिसके व्यवहारिक ज्ञान का आधार पोंथिया नही है, ये लोग अकृत्रिम और सरल जीवन व्यतीत करते है।

एम. सी. वर्किट --- किसी राष्ट्र अथवा जाति की सभ्यता के विषय मे पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने हेतु कला से सहायता प्राप्त करना अत्यन्त आवश्यक होता है, क्योकि इसी से रीति-रिवाज, रहन-सहन के ढंग को भलि भांति जाना जा सकता है।

भारत मे पृथ्वी को धरती माता कहकर पूजा जाता है। परन्तु मातृभूमि तो इसका परिमार्जित एवं सांस्कृतिक रूप है। धारती माता के प्रति भक्ति भावना को व्यक्त करने के लिये भिन्न-भिन्न प्रान्तो मे अलग- अलग नाम से धरती का श्रृंगार तथा अलंकरण किया जाता है, जैसे गुजरात मे साथिया, राजस्थान मे माण्डना, महाराष्ट्र मे रंगोली, उत्तर प्रदेश मे चौक पूरना आदि लोक कला का ही रूप है। भारत मे लोककला को दो रूपो मे बांटा जाता है। एक मूर्त लोककला, जिसमे उन वस्तुओ को शामिल किया जाता है, जो ऐतिहासिक रूप से पारंपरिक समुदाय के भीतर तैयार व उपयोग की जाती है। और दूसरा अमूर्त लोककला, जिसमे संगीत और कला दीर्घाए, नृत्य और कथा संरचनाए जैसे रूप को शामिल किया जाता है। भारतीय लोककला उस विविधतावादी और समृध्द सांस्कृतिक विरासत का प्रतिनिधित्व करती है। जो भारत के विभिन्न क्षेत्रो और जातियो मे पायी जाती है। यह कला और विरासत भारत के लोगो के जीवन विचार और सम्प्रेषण का महत्वपूर्ण हिस्सा है।

भारतीय लोककला के कई रुप है, जिनमे संगीत, नृत्य, कथा, नाटक और शिल्प विधा शामिल है। यह विभिन्न समुदायों के लोकपरंपराओ, धार्मिक, आदर्शों और स्थानिय सामाजिक आधारो का प्रतिनिधित्व करती है।

भारतीय लोक संगीत—

इसमे बादशाही भजन, गाथा, लोकगीत, कव्वाली, ठुमरी, ख्याल, रागिनी, भोपा, बौल राई और मन्द संगीत समाहित है। यह विभिन्न अवाज, विभिन्न प्रकार की भावनाओ ताल और इंस्ट्रुमेंट का उपयोग करते और अनुभवो को व्यक्त करती है।

भारतीय लोक नृत्य — भारतीय लोकनृत्य में भी विविधता के दर्शन होते है। उत्तर भारतीय कथक, दक्षिण भारतीय भरतनाट्यम, केरल के कथकली, पंजाबी गिद्दा और अन्य राज्यों के लोकनृत्यों को शामिल करती है। इन शैलियो मे अभिव्यक्ति संगीत और रंगमंच का महत्वपूर्ण योगदान होता है।

भारतीय लोककला - भारतीय लोककला मे कला और शिल्पविधा का भी महत्वपूर्ण स्थान है। यह चित्रकला, मूर्तिकला, तांत्रिककला और वास्तुकला जैसी शैलियों को खुद मे शामिल करती है। ये कलायें अपने समुदायो और स्थानिय परंपराओ को दर्शाती है। और उनकी विविधता एवं समृध्दि को प्रस्तुत करती है।

भारतीय लोककला अपने विविधता समृध्दता और रंगीनता के लिये मशहूर है, यह दुनिया भर मे लोगो को प्रभावित करती है। इसके माध्यम से लोग अपने संगीत नृत्य और कला एवं अपनी भावनाओ भावो और धार्मिक आदर्शो को व्यक्त करते है, और समाज में एकता और सहयोग की भावना को बढावा देते है।

भारतीय लोककला सांस्कृतिक विरासत का स्वरुप है। इसकी प्रविधि बहु प्राचीन है। क्योंकि यह भारत के विभिन्न क्षेत्रो जनजातियो और समुदायो की विविधता और समृध्दता का प्रतिनिधित्व करती है। इसमे ऐतिहासिक विवरणात्मक प्रविधि के व्दारा जानकारी प्राप्त की जाती है। भारतीय लोककला की चर्चा सांस्कृतिक संरक्षण की दिशा में होती है। जिसमे समुदायो को अपनी परंपराये और विरासत की महत्वता को समझने का प्रयास किया जाता है। यह सांस्कृतिक विरासत को बचाने और प्रोत्साहित करने मे मदद करता है। भारतीय लोककला की चर्चा समाजिक एकता की दिशा मे भी होती है। यह लोगो को उनके सांस्कृतिक विरासत के साथ जोडती है, और समाजिक सहयोग एवं एकजुटता को बढावा देती है।

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 01, No 08, PP 273-304 Nov. 2025 (Total PP 32)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly

भारतीय लोककला सांस्कृतिक अत्मनिर्भरता को दिशा प्रदान करती है, यह लोगो को अपने स्थानीय शिल्पकला और शिल्प विरासत को समझने और समर्थ बनाने मे मदद करती है। और लोगो की सृजनात्मकता को प्रोत्साहित करती है। उन्हे नयी प्रेरणाओ के साथ जोड कर, नये कलाकारो के उत्साह को बढावा देती है। और भारतीय कला की विविधता को भी बढावा देती है।

भारतीय लोककला से लोगो को अपने सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक गौरव का एहसास होता है। इससे लोगो को समझ आता है कि वे अपनी समृध्दता और अव्दितीयता मे कितने महत्वपूर्ण है। और इसको संजोये रखना एक जिम्मेदारी है, जिससे आने वाले पीढी को हस्तांतरित किया जा सके। भारतीय लोक कला के कुछ प्रकार है।

1 - मधुबनी पेंन्टिंग- यह बिहार राज्य की लोक कला है, जिसमे देवी- देवता विवाह समारोह उत्सव, आदि को विषय के रूप में चित्रित किया जाता है, जिसके लिए प्राकृतिक रंग और बारीक ब्रश प्रयोग किया जाता है। इसमे मिथिला क्षेत्र की सांस्कृतिक एवं धार्मिक कथाओ का सुन्दर तथा मार्मिक अंकन होता है।

मधुबनी पेंटिग

2- वरली पेन्टिंग --- महाराष्ट्र की वरली जनजातीय की यह कला सफेद रंग से की जाती है, इसमे दैनिक जीवन, प्रकृति, देवी-देवताओं का चित्रण किया जाता है।

वरली पेंन्टिंग

3---पट चित्र---लोक कला का यह रूप उडीसा और पश्चिम बंगाल का है, जिसमे धार्मिक कथाओ और मिथको का विस्तृत वर्णन किया जाता है।

4---फड चित्र - राजस्थान की प्रसिद्ध लोक कला है जो कपड़ो पे की जाती है। इसमे धार्मिक कथाओं और नायको की कथाओं का चित्रण किया जाता है।

फडचित्र

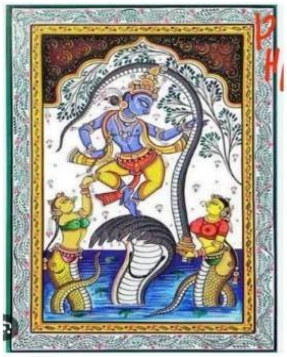

पटचित्र

जनजातीय कला-- भारतीय जनजातियो की कला के विभिन्न प्रकार है

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 01, No 08, PP 273-304 Nov. 2025 (Total PP 32)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly

गोंड आर्ट   सौंरा आर्ट

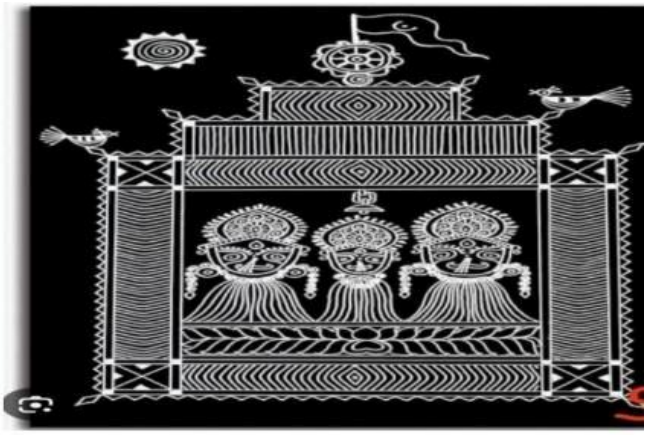

टोटेम कला

1. गोंड कला -– मध्यप्रदेश की गोंड जनजाति की यह चित्रकला रंग-बिरंगो चित्रों और ज्यामितीय पैटर्न का प्रयोग करके एक नयी कला का विकास करती है।

2. सौरा पेंन्टिंग - राजस्थान और मध्यप्रदेश के साँवरा जनजाति की यह कला देवी- देवताओं और धार्मिक मान्यताओं पर अधारित है।

3. भील आर्ट - मध्यप्रदेश गुजरात और राजस्थान की भील जनजाति की यह चित्रकला बिन्दुओं और ज्यामितीय आकृतियों का प्रयोग किया जाता है।

4. टोटेम्स-–- नागालैंण्ड और अन्य पूर्वोत्तर राज्यो की जनजातियों की यह कला लकडी पर नक्काशी करके बनाई जाती है। और इसमे धार्मिक और सांस्कृतिक प्रतीक होते है।

निष्कर्ष

भारतीय लोककला एवं जनजातीय कला सांस्कृतिक विरासत का स्वरूप विशाल और अत्यंत समृध्द है। यह विरासत भारतीय समाज के अगाध इतिहास विविधता और सांस्कृतिक विरासत का प्रतिनिधित्व करती है।

इसमे भारत के विभिन्न क्षेत्रो और जनजातियो की भावनाओं धार्मिक अनुष्ठान, स्थानीय परंपराओ और जीवन शैली का प्रतिनिधित्व होता है। भारतीय लोककला एवं जनदातीय कला का स्वरूप विविधता और समृध्दता मे है, इसमे भावनात्मक और रागीयताओ का गहरा परिचय होता है। जो भारतीय जीवन के विभिन्न पहलुओ को दर्शाता है। यह भारतीय समुदायो के सम्बन्ध परंपराओ और जीवन शैली का महत्वपूर्ण हिस्सा है और उनकी विविधता और एकता को प्रस्तुत करता है। भारतीय लोककला मे संगीत, नृत्यकला, कथा नाट्य और शिल्पविधा जैसी विभिन्न कलाओ का समावेश होता है। यह कलायें समाज मे एकता, सहयोग और विश्वास को बढावा देती है। और सांस्कृतिक विरासत को बचाने और बढ़ावा देने मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

Kalaa Samiksha - Volume 01, No 08, PP 273-304 Nov. 2025 (Total PP 32)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly

इस सांस्कृतिक विरासत का स्वरूप विविधता समृध्दता और शिक्षाप्रद है। यह भारतीय समाज के गहरी और समृध्द संगीत, नृत्य, कला और कथाओ के जीवन मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। और लोगो को उनके ऐतिहासिक सांस्कृतिक और धार्मिक अधारो के साथ जोड़ती है। इन जनजातीय कला को संवर्धित करना हम सभी की जिम्मेदारी है यह कलाऐ नई पीढ़ी को अपनी जडो से जोडने का माध्यम होती है। इसके संरक्षण के लिए सरकारी गैर-सरकारी और समुदायिक स्तर पर प्रयास किये जाने चाहिए।

सहायक सन्दर्भ सूची

पुस्तक

- बोजर, अंजलि (1997), भारतीय लोक संगीत, प्रकाशक रवीश कुमार ।
- डा. भानवत, महेन्द्र (1979), संस्कृति के रंग, भारतीय लोककला मण्डल, उदयपुर ।।
- वात्स्यायन, कपिला (2001), भारतीय लोक नृत्य, साहित्य अकादमी ।।
- डा. वर्मा, अविनाश बहादुर, अमित, (2007), कला एवं तकनीक, प्रकाश बुक डिपो, बरेली।।
- कान्त, मीनाक्षी (2015), भारतीय कला संस्कृति एवं विरासत, एसेस पब्लिशिंग ।।
- डा. राजपुरोहित, भगवती लाल (2019), भारतीय कला और संस्कृति, शिवालिक प्रकाशन दिल्ली।।
- कुमार, अनूप (2020), इण्डियन फोक एण्ड ट्राइबल आर्ट, बी. आर. पब्लिशर ।।
- डा. श्री वास्तव, अरुण कुमार (2021), भारतीय संस्कृति एवं विज्ञान, अर्णब एंटरप्राइसेस नई दिल्ली।।
- डा. रंजन, मनीष (2023), भारतीय कला एवं संस्कृति, प्रभात प्रकाशन प्रा. लि. ।।

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 01, No 08, PP 273-304 Nov. 2025 (Total PP 32)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly

4. ENVIRONMENTAL PERSPECTIVES IN FOLK AND TRIBAL ARTS: A CULTURAL AND AESTHETIC STUDY (लोक एवं जनजातीय कलाओं में पर्यावरणीय दृष्टि: एक सांस्कृतिक एवं सौंदर्यात्मक अध्ययन)

Shreya Dwivedi[a]*

[a] Assistant Professor, Dev Bhoomi Uttarakhand University

[a] *Email: shreyaji2316@gmail.com*

Abstract

Indian folk and tribal art is part of a rich cultural heritage that expresses the reciprocal relationship between humans and nature in a remarkably simple, sensitive, and symbolic way. The most striking feature of these art forms is that nature is not merely a visual backdrop, but is presented as a living, active, and revered entity. Whether it's the trees in Gond art, the agricultural cycles in Warli paintings, the rivers and lotus flowers in Madhubani art, or the fluid forms of animals and birds in Bhil paintings, nature emerges everywhere as the fundamental basis of community life. The environmental sensitivity inherent in these art forms helps us understand not only how, but also why local communities consider nature so important.

This research paper studies the structure, use of natural resources, symbolism, color language, and community experiences of various folk and tribal art traditions. In particular, it highlights how these art forms can serve as a source of inspiration for addressing modern environmental concerns such as sustainable development, biodiversity conservation, and the balanced use of natural resources. The use of natural dyes, organic materials, and sustainable techniques by these communities demonstrates that aesthetics and environmental conservation are not contradictory but mutually reinforcing.

In contemporary times, commercialization, modernization, and technological intervention have presented these art traditions with both new challenges and opportunities. Nevertheless, the environmental perspective embedded in these art forms remains highly relevant today because it inspires humanity to adopt a sensitive, responsible, and balanced approach to nature.

भारतीय लोक एवं जनजातीय कला उस सांस्कृतिक विरासत का हिस्सा है, जो मनुष्य और प्रकृति के पारस्परिक संबंधों को अत्यंत सहज, संवेदनशील और प्रतीकात्मक रूप में अभिव्यक्त करती है। इन कला-रूपों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इनमें प्रकृति केवल दृश्य-पृष्ठभूमि नहीं, बल्कि एक जीवंत, सक्रिय और आदर योग्य सत्ता के रूप में प्रस्तुत होती है। चाहे गोंड कला के पेड़ हों, वारली के कृषि-चक्र, मधुबनी की नदियाँ और कमल हों, या भील चित्रकला में पशु-पक्षियों के तरल रूप हर जगह प्रकृति समुदाय के जीवन का मूल आधार बनकर उभरती है। इन कलाओं में निहित पर्यावरणीय संवेदना हमें यह समझने में सहायता करती है कि स्थानीय समाज प्रकृति को किस प्रकार ही नहीं, बल्कि क्यों भी महत्वपूर्ण मानता है।

इस शोध-पत्र में विभिन्न लोक एवं जनजातीय कला-परंपराओं की संरचना, उनके प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग, प्रतीक-विधान, रंग-भाषा तथा सामुदायिक अनुभवों का अध्ययन किया गया है। विशेष रूप से यह स्पष्ट किया गया है कि ये कला-रूप आधुनिक पर्यावरणीय चिंताओं जैसे- सतत विकास, जैव विविधता संरक्षण, प्राकृतिक संसाधनों के संतुलित उपयोग के लिए कैसे प्रेरणास्रोत बन सकते हैं। इन समुदायों द्वारा प्राकृतिक रंगों, जैविक सामग्रियों एवं सतत तकनीकों का प्रयोग यह दर्शाता है कि सौंदर्यशास्त्र और पर्यावरण-संरक्षण एक-दूसरे के विरोधी नहीं, बल्कि परस्पर पूरक हैं।

समकालीन समय में बाज़ारीकरण, आधुनिकता और तकनीकी हस्तक्षेप ने इन कला-परंपराओं को नई चुनौतियों और अवसरों, दोनों से परिचित कराया है। फिर भी इन कलाओं में निहित पर्यावरणीय दृष्टि आज भी अत्यंत प्रासंगिक है क्योंकि यह मनुष्य को प्रकृति के प्रति संवेदनशील, जिम्मेदार और संतुलित जीवन दृष्टि अपनाने के लिए प्रेरित करती है।

Keywords: Folk art, tribal art, environmental perspective, aesthetics, ecology, sustainable development
लोक कला, जनजातीय कला, पर्यावरणीय दृष्टि, सौंदर्यशास्त्र, पारिस्थितिकी, सतत विकास

---

* Corresponding author.

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 01, No 08, PP 273-304 Nov. 2025 (Total PP 32)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly

प्रस्तावना

भारतीय कला परंपरा अत्यंत विशाल, विविधतापूर्ण और बहुरंगी है, जिसमें लोक एवं जनजातीय कला विशेष स्थान रखती हैं। इन कला-रूपों की सबसे विशिष्ट विशेषता यह है कि वे जीवन के किसी कृत्रिम या बाहरी सौंदर्य से नहीं बल्कि समुदाय, प्रकृति और अनुभव के मूल संबंधों से उत्पन्न होती हैं। लोक कला सामान्य जनजीवन से जुड़ी होती है, जबकि जनजातीय कला आदिवासी समुदायों की सांस्कृतिक स्मृतियों, विश्वासों और पर्यावरण के साथ उनके संबंधों को व्यक्त करती है।

इन दोनों प्रकार की कला में जो समान तत्व दिखाई देता है, वह है प्रकृति के प्रति गहरा सम्मान। चाहे वह गोंड चित्रकला में वृक्ष की लहराती शाखाएँ हों, मधुबनी में मछलियाँ और कमल हों, वारली में कृषि और वर्षा चक्र हों या भील कला में वन-पशु सभी कला-रूप प्रकृति के साथ जीवंत संवाद प्रस्तुत करते हैं।

आज जब आधुनिकता, औद्योगीकरण और शहरीकरण के कारण पर्यावरण संकट दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है, तब लोक एवं जनजातीय कला समाज को एक संतुलित, पर्यावरण-उन्मुख जीवन पद्धति की याद दिलाती हैं। यही इस शोध-पत्र का मुख्य उद्देश्य है, लोक एवं जनजातीय कलाओं में निहित पर्यावरणीय दृष्टि का अध्ययन और उसका समकालीन महत्व।

लोक एवं जनजातीय कला की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि

भारतीय लोक और जनजातीय कला किसी एक कलाकार की व्यक्तिगत अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि समुदायों की सामूहिक स्मृति, पीढ़ियों से संचित अनुभव और प्रकृति से प्रत्यक्ष सम्पर्क का परिणाम है। इन कला-परंपराओं में जीवन, संस्कृति और प्रकृति के बीच सहज संतुलन दिखाई देता है। भारत के विविध भौगोलिक क्षेत्रों में विकसित कला-रूप—जैसे मध्य भारत की गोंड कला, छत्तीसगढ़ और मध्य प्रदेश की भील कला, महाराष्ट्र की वारली कला, बिहार की मधुबनी परंपरा, तथा झारखंड-बंगाल में प्रचलित संथाल कला—अन्य सामाजिक एवं सांस्कृतिक पहलुओं के साथ-साथ प्रकृति-आधारित जीवन-दृष्टि को भी अत्यंत गहराई से दर्शाती हैं।

गोंड कला में "जीवंतता" का सिद्धांत अत्यंत महत्वपूर्ण है, जिसके अनुसार प्रकृति का प्रत्येक तत्व—पेड़, नदी, पशु-पक्षी—एक सजीव सत्ता मानी जाती है। भील चित्रण में बिंदुओं और जीवंत रंगों के माध्यम से ऋतुचक्र, पशु-पक्षियों और प्राकृतिक चक्रों के प्रति सघन संवेदनशीलता प्रकट होती है। वारली चित्रकला ग्रामीण जीवन, वर्षा, कृषि और श्रम की सामूहिकता को एक विशिष्ट रेखात्मक शैली में रूपायित करती है। वहीं मधुबनी और संथाल कला जल, सूर्य, पशु-पक्षियों और पृथ्वी तत्वों को प्रतीकात्मक रूप में प्रस्तुत करते हुए मनुष्य और प्रकृति के निरंतर संवाद को अभिव्यक्ति देती हैं।

इन तमाम कला-रूपों का साझा आधार यह है कि वे प्रकृति को किसी सजावटी पृष्ठभूमि की तरह नहीं, बल्कि एक जीवित, सक्रिय और नैतिक रूप से महत्वपूर्ण सत्ता के रूप में देखते हैं।

लोक एवं जनजातीय कला में पर्यावरणीय दृष्टि

लोक और जनजातीय समुदाय प्रकृति को दो प्रमुख स्तरों पर समझते हैं—

(1) प्रकृति एक जीवित सत्ता,

(2) प्रकृति एक नैतिक संरक्षक।

प्रथम स्तर पर इन समुदायों में यह मान्यता है कि प्रकृति का प्रत्येक तत्व—चाहे वह पशु हो, पेड़-पौधा, पर्वत, जल या नदी—एक प्रकार की चेतना और जीवन शक्ति से सम्पन्न है। गोंड कला में प्रचलित "बंधन-शक्ति" सिद्धांत इसका प्रमुख उदाहरण है, जिसमें सम्पूर्ण प्रकृति को परस्पर जुड़ी हुई जीवित शक्तियों का तंत्र माना जाता है।

दूसरे स्तर पर, प्रकृति को एक नैतिक संरक्षक के रूप में देखा जाता है। जनजातीय जीवन में यह विचार गहराई से निहित है कि मनुष्य का दायित्व है कि वह पर्यावरणीय संतुलन को न केवल समझे बल्कि उसका संरक्षण भी करे। इसलिए जल, वृक्ष, पशु, सूर्य, पृथ्वी आदि प्राकृतिक तत्वों का चित्रण केवल प्रतीकात्मक नहीं, बल्कि एक नैतिक संदेश भी देता है।

लोक/जनजातीय कला में प्रमुख पर्यावरणीय प्रतीक इस प्रकार हैं—

- वृक्ष – जीवन, वंश-वृद्धि और संरक्षण के प्रतीक
- जल – पवित्रता, निरंतरता और जीवन-स्रोत
- सूर्य – ऊर्जा, समय चक्र और सृजन
- पशु-पक्षी – पारिस्थितिक संतुलन
- पृथ्वी – मातृत्व और सृजन शक्ति का प्रतीक

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 01, No 08, PP 273-304 Nov. 2025 (Total PP 32)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly

इसी दृष्टि के कारण लोक और जनजातीय कला एक प्रकार का दृश्य पर्यावरण-शास्त्र बन जाती है, जिसमें प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग भी स्वभावतः सतत और संतुलित रहता है—जैसे मिट्टी, पत्ते, प्राकृतिक रंग, लकड़ी और धातु का संयमित प्रयोग।

इस दृष्टि से लोक/जनजातीय कला एक दृश्य पर्यावरण शास्त्र का रूप ले लेती है।

प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग और सततता

लोक एवं जनजातीय कला का सबसे बड़ा पर्यावरणीय योगदान यह है कि इसमें पूर्णतः प्राकृतिक सामग्रियों का प्रयोग होता है:

श्रेणी	**संसाधन / तकनीक**	**विवरण / उपयोग**
प्राकृतिक रंग	गेरू	मिट्टी आधारित लाल-भूरा रंग; भित्ति-चित्र और ग्रामीण दीवार सज्जा में उपयोग
	काजल	रेखांकन, सीमांकन और आँखों/आकृतियों की गहराई देने हेतु
	हल्दी	शुभता, पवित्रता और पृष्ठभूमि रंग के रूप में
	पत्तों व फूलों से बने रंग	जैविक हल्के रंग; फ्रेस्को, वस्त्र और अलंकरण में उपयोग
	मिट्टी के विविध रंग	गोंड, वारली, सोहराई कला का मूल आधार
प्राकृतिक सतहें आधार	मिट्टी/गोबर लीपी दीवारें	वारली, भील, सोहराई जैसी दीवार-आधारित कलाओं में
	कपड़ा	मधुबनी, गोंड चित्रण; प्राकृतिक रेशों पर कार्य
	लकड़ी	मुखौटे, मूर्तियाँ और पारंपरिक शिल्प
	धातु	ढोकला शिल्प में प्राकृतिक मोम-ढलाई तकनीक के लिए
	पत्तियाँ	अल्पना, पूजा-सजावट, पारंपरिक हस्तशिल्प
सतत हस्तकला तकनीकें	ढोकला धातु शिल्प	पूरी तरह प्राकृतिक मोम-ढलाई तकनीक; पर्यावरण-अनुकूल

	बाँस व लकड़ी की नक्काशी	स्थानीय संसाधन, न्यूनतम अपशिष्ट, पर्यावरण-संगत
	प्राकृतिक तंतुओं से बुनाई	टोकरी, चटाई, घरेलू वस्तुएँ—100% जैविक और सतत

ये तकनीकें पर्यावरण को कोई नुकसान नहीं पहुँचातीं, बल्कि स्थानीय पारिस्थितिक चक्रों को बनाए रखती हैं।

वैश्वीकरण, बाज़ारीकरण और समकालीन चुनौतियाँ

आज के समय में लोक और जनजातीय कला नई परिस्थितियों का सामना कर रही है:

उनमें से यह कुछ प्रमुख है जैसे:-

(1) कृत्रिम रंगों का प्रयोग बढ़ना

प्राकृतिक रंगों की जगह सस्ते लेकिन हानिकारक केमिकल रंगों का उपयोग पर्यावरण को नुकसान पहुँचाता है।

(2) व्यावसायिक दबाव

कला की मौलिकता कम होती है।

परंपरागत विषय गायब होने लगते हैं।

(3) सांस्कृतिक पहचान का संकट

आधुनिकता और शहरीकरण ने कई समुदायों की कला-परंपराओं को हाशिये पर धकेल दिया है।

(4) ज्ञान का कम हस्तांतरण

युवा पीढ़ी इस कला को अपनाने में कम रुचि दिखा रही है।

इन चुनौतियों के बावजूद, लोक एवं जनजातीय कला का पुनरुत्थान भी देखा जा रहा है -सरकारी योजनाएँ, ऑनलाइन कला बाज़ार, संग्रहालय, और शोध इन कलाओं को नई पहचान दे रहे हैं।

निष्कर्ष

लोक एवं जनजातीय कलाओं में निहित पर्यावरणीय दृष्टि इस बात का संकेत देती है कि इन समुदायों ने प्रकृति को केवल संसाधन नहीं बल्कि जीवन का अभिन्न अंग माना है। उनकी कला-परंपराएँ यह दर्शाती हैं कि मनुष्य तभी संतुलित और सार्थक जीवन जी सकता है जब वह प्राकृतिक परिवेश के साथ सम्मानजनक संबंध बनाए रखे। प्राकृतिक रंगों, जैविक सामग्रियों और पारंपरिक तकनीकों का उपयोग यह सिद्ध करता है कि सततता और सौंदर्य, दोनों एक साथ चल सकते हैं।

परंतु वैश्वीकरण, बाज़ार के दबाव और सांस्कृतिक बदलावों के कारण इन कला-रूपों के सामने कई नई चुनौतियाँ भी उत्पन्न हुई हैं। फिर भी यह कला-परंपराएँ अपने भीतर ऐसी सांस्कृतिक और पारिस्थितिक चेतना संजोए हुए हैं, जो आधुनिक समाज को प्रकृति के प्रति जिम्मेदार और संवेदनशील बनने के लिए प्रेरित करती हैं।

इसलिए आवश्यक है कि इन कलाओं को संरक्षण, प्रोत्साहन और अध्ययन के माध्यम से आगे बढ़ाया जाए, ताकि इनमें निहित पर्यावरणीय संदेश वर्तमान और आने वाली पीढ़ियों तक पहुँच सके। स्पष्ट है कि लोक एवं जनजातीय कला केवल सांस्कृतिक विरासत नहीं, बल्कि पर्यावरण-संतुलन की दिशा में मार्गदर्शन प्रदान करने वाली महत्वपूर्ण धरोहर है।

संदर्भ

1. देवयानी, आर. भारतीय जनजातीय कला का पर्यावरणीय दृष्टिकोण, नई दिल्ली: भारतीय कला परिषद, 2018

2. शर्मा, मोनिका. लोक कला की प्रकृति-आधारित परंपराएँ, राजस्थान कला अकादमी, 2016

3. वर्मा, सुशीला. गोंड एवं भील कला का सांस्कृतिक अध्ययन, भोपाल: जनजातीय संग्रहालय प्रकाशन, 2019

4.त्रिपाठी, एन. पी. भारतीय लोक-संस्कृति और पारिस्थितिकी, इलाहाबाद विश्वविद्यालय प्रकाशन, 2014

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 01, No 08, PP 273-304 Nov. 2025 (Total PP 32)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly

5. INCORPORATING MODERN TECHNOLOGY INTO TRADITIONAL GOND ART AND CULTURAL EXPRESSION (पारंपरिक गोंड कला में आधुनिक तकनीक का समावेश एवं सांस्कृतिक अभिव्यक्ति)

Pallavi Verma[a]*

[a] *research student, Department of Visual Arts, Allahabad University, Prayagraj U.P.*

[a]*Email: pallaviverma119@gmail.com*

Abstract:

The Gond tribe of Madhya Pradesh is considered one of the oldest and richest tribes in India, with an art tradition that has been passed down for centuries. The history of Gond art is deeply intertwined with their myths, folklore, beliefs about nature, and daily life. Originally, this art was created on the walls and mud floors of their homes using natural pigments. It depicted trees, plants, animals, deities, and glimpses of tribal life. Over time, this art evolved from being purely decorative to becoming a significant medium for expressing the cultural identity and philosophy of the Gond community. In the present day, the influence of modern technology on this traditional art form is clearly visible. Artists are now using acrylics, inks, pens, canvas, and mixed media alongside natural pigments. Digital platforms and art exhibitions have given Gond art a new identity at both national and international levels. Technological advancements have also enhanced the creative freedom of the artists. They are now experimenting with colors, shapes, and compositions—sometimes incorporating digital textures, and at other times transforming natural forms into modern designs. This has fostered innovation in the art form, making it more appealing to contemporary audiences. Based on this, the objective of this research is to understand how the advent of technology has influenced the style, subject matter, and cultural expression of Gond art. This study presents an identification and analysis of the new artistic forms that are emerging from the confluence of tradition and technology.

मध्य प्रदेश की गोंड जनजातीय भारत की सबसे प्राचीन और समृद्ध जनजातियों में से मानी जाती है ,जिसकी कला परंपरा सददयों से चली आ रहीं है। गोंड कला का इतिहास उनके मिथकों, लोककथाओं, प्रकृति के प्रति विश्वास और दैनिक जीवन से जुडा हुआ है। पहले यह कला घरों की दीवारों ,मिट्टी के फर्श और प्राकृतिक रंगों से बनाई जाती थी। इसमें पेड-पौधों, जानकर एवं देवी-देवताओं व जनजातीय जीवन की झलक मिलती हैं। समय के साथ-साथ यह कला सजावटी नहीं रही, बल्कि गोंड समाज की सांस्कृतिक पहचान और जीवन दर्शन का महत्वपूर्ण माध्यम बन गईं।आज के वर्तमान समय में इस पारम्परिक कला पर आधुनिक तकनीक का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता हैं। कलाकार अब प्राकृतिक रंगों के साथ एक्रेलिक, इंक, पेन, कैनवस और मिश्रित माध्यम का प्रयोग कर रहे हैं। साथ ही डिजिटल प्लेटफाम एवं कला प्रदर्शनियों ने गोंड कला को राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर नई पहचान दी हैं। साथ ही तकनीकी माध्यमों ने कलाकारों की रचनात्मक स्वतंत्रता को भी बढाया है। वे जब अब रंगों, आकृतियों और संरचनाओं के साथ प्रयोग कर रहे हैं—कभी डिजिटल टेक्सचर जोड रहे हैं, तो कभी प्राकृतिक आकृतियों को आधुनिक रूपाकार में ढाल रहे हैं। इससे कला में नवाचार बढा है और दशकों के लिए यह अधिक आकर्षक बन गई है। इसी आधार पर प्रस्तुत शोध का उद्देश्य यह समझना है, कि तकनीक के आगमन ने गोंड कला की शैली, विषय-वस्तु और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति को किस प्रकार प्रभावित किया है। यह अध्ययन परंपरा और तकनीक के समन्वय से विकसित हो रहे नए कलात्मक स्वरूप की पहचान और विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

Keywords: Rich, myths, cultural expressions

समृद्ध, मिथकों, सांस्कृतिक अभिव्यक्ति

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 01, No 08, PP 273-304 Nov. 2025 (Total PP 32)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly

---

* Corresponding author.

प्रस्तावना

गोंड जनजाति भारत की सबसे पुरानी और बड़ी जनजातियों में मानी जाती है, जिनका इतिहास हजारों वर्षों पुराना माना जाता है। यह मुख्य रूप से मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, छत्तीसगढ़, आंध्र प्रदेश और उड़ीसा के जंगलों और पहाड़ी इलाकों में बसते आए हैं। गोंड शब्द **"कोंड**" या "कुंड" से निकला माना जाता है, जिसका अर्थ है पहाड़ी क्षेत्र में रहने वाले लोग। प्राचीन काल में गोंड लोग छोटे-छोटे कबीलाई समूहों में रहते थे और उनका अपना सामाजिक ढांचा, अपनी भाषा (गढ़ा-मांधरी), अपने पर्व, और अपनी सांस्कृतिक परंपराएं थीं।

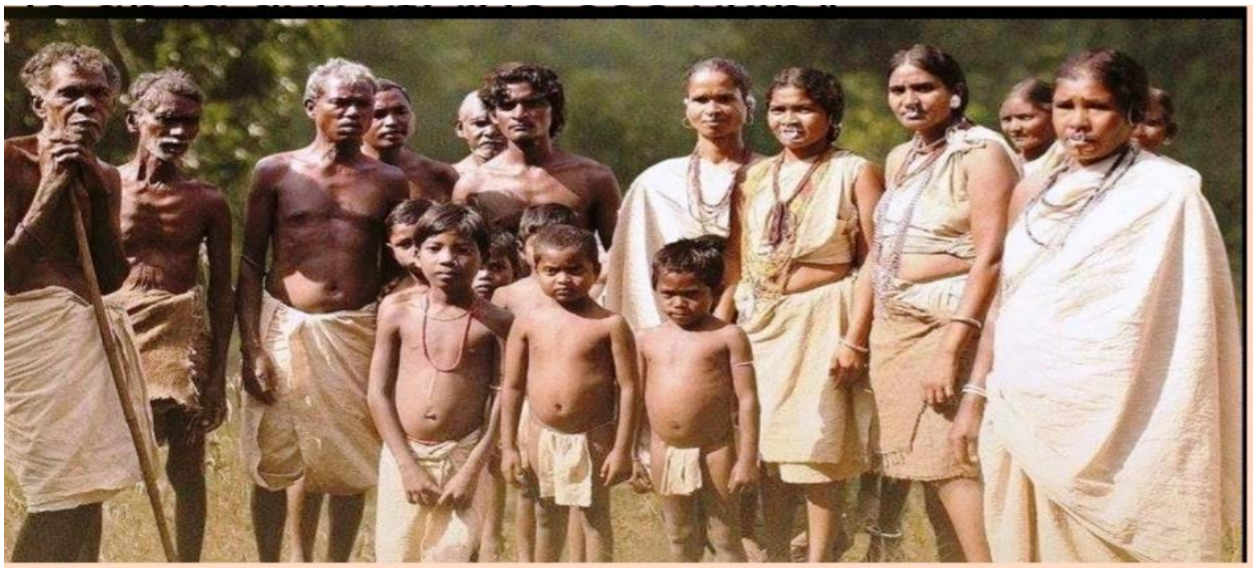

गोंड जनजाति लोग

भारत में जनजातीय कला एक महत्वपूर्ण सांस्कृतिक धरोहर मानी जाती हैं, क्योंकि यह कला केवल सौन्दर्य या सजावट के उद्देश्य से नहीं बनाई जाती, बल्कि जीवन के अनुभवों परम्पराओं, मान्यताओं और प्राकृतिक परिवेश से गहराई से संबधित होती हैं। भारत की अनेक जनजातियों में से "**गोंड जनजाति"** अपनी विशेष पहचान रखती हैं। मध्य प्रदेश के कही और पहाड़ी दोषों में गोंड कला की मूल संरचना उनके आस-पास के वातावरण पर आधरित हैं। पेड़ों की आकृतियां, जानवरों का अंकन, जंगल की लय और त्योहारों की जीवंत यह सब उनके चित्रों में अलग प्रतीक बनकर उभरता दिखाई देते हैं। गोंड कला में बनाई जानें वाली **बिन्दु व रेखाए,** पैटर्न और आकृतियां केवल डिजाइन नहीं हैं, बल्कि उनके विश्वासों के प्रतीक हैं। गोंड कला केवल परम्परा तक सीमित नहीं रहीं। समय के साथ सामाजिक अर्थिक और सांस्कृतिक बदलावों प्रभाव इस कला पर भी दिखाई लेने लगा। विशेष रूप से "**तकनीक**" ने कला की दुनिया को जिस तरह बदला है, उसका असर गोंड कला पर भी दिखाई पड़ता है।

आज तकनीक कलाकारों को नए माध्यमो, नई सभावनाएं और नए मंच प्रदान कर रहे हैं। कलाकारों ने आधुनिक रंगो, ब्रशों, एक, डिजिटल आकृति और प्रिंटिंग तकनीकों का उपयोग कर रहें, इससे न केवल कला की शैली में परिवर्तन आया हैं, बल्कि प्रस्तुति के तरीकों में भी विविधता बढ़ती जा रहीं हैं।कई ऐसे कलाकार जैसे **जनगढ़ सिंह श्याम, की पत्नी ननकुसिया श्याम, दुर्ग वाई, नर्मदा प्रसाद तेकाग, आनंन्द सिंह श्याम, राम सिहं उवैति, भज्जू, सुभाष व्यास, क वेकटरमन सिंह श्याम आदि** में काम गोंड कला में हुए परिवर्तन के साक्षी हैं।

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 01, No 08, PP 273-304 Nov. 2025 (Total PP 32)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly

कलाकार जनगढ़ सिंह श्याम

इन कलाकारो के नागर सभ्यता के सम्पर्क में आने के कारण एक तरफ जहां कुछ नए विषय जुड़े वहीं नवीनतम कला माध्यमों से जुड़े एवं आधुनिक कला के संम्पर्क में आने के बाद शैली और संयोजन के स्तर पर भी बदलव दिखाई देते हैं। इन कलाकारों की कलाकृतियां अब केवल स्थानीय मेलों व प्रदर्शनियो तक सीमित नहीं, बल्कि वैश्विक दर्शको तक पहुंच रहीं हैं। इससे कला की पहचान, मांग और मूल्य तीनों में अधिक वृद्धि हुई हैं। गोंड कला की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति आज भी उतनी ही मजबूत हैं, जितनी पहले थीं। वास्तविकता माध्यम बदल गए हो, लेकिन विषय, भाव और अभिव्यक्ति के मूल तत्व अब भी वहीं बनें हुए हैं। कलाकार आधुनिक साधनों का उपयोग करते हुए भीं पारंपरिक विषयों जोडे हुए हैं। इस तरह मध्य प्रदेश की गोंड कला आज पुरानें और नए दोनों रूपों में दिखाई देती हैं।

गोंड कला: ऐतिहासिक परिदृश्य – भारतीय कला के इतिहास में विभिन्न जनजातीय समुदाय का योगदान सराहनीय रहा हैं, जैसे, महाराष्ट्र की वलीं विहार की मधुबनी, राजस्थान की फड़ चित्रकला, आदिवासी भील कला, गोंड कला आदि।गोडो का प्रदेश गोंडवाना के नाम से भी प्रसिद्ध है जहाँ 14 वीं तथा 17 वीं शताब्दी के बीच गोंडवाना में अनेक राजगोंड राजवशो का दृढ और सफल शासन स्थापित था। इन शासकों ने बहुत से दृढ दुर्ग, तालाब तथा स्मारक बनवाए।मध्य भारत की आदिवासी चेतना, लोकअनुभव और प्रकृति-केन्द्रित विश्वदृष्टि की एक प्राचीन दृश्य परंपरा है, जिसने समय के साथ अपना विशिष्ट रूप, प्रतीक-विन्यास और सौंदर्य-तत्व विकसित किए हैं। यह कला केवल चित्रनिर्माण की प्रक्रिया नहीं है, बल्कि गोंड समुदाय की ऐतिहासिक स्मृतियों, ब्रह्मांड-चेतना और जीवंत सांस्कृतिक मान्यताओं का एक रूपांतरण है।गोंड कला मध्य
भारत की प्रमुख आदिवासी कला हैं, जो गोंड जनजाति के जीवन, परंपराओं और आस्थाओं को दर्शाती हैं।

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 01, No 08, PP 273-304 Nov. 2025 (Total PP 32)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly

दीवारों पर गोंड कला

यह मुख्यत: मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ के हिस्सों में प्रचलित हैं।गोंड चित्रकला दीवारों, छतो और कागज़ पर बनाई जाती हैं, और इसमें प्राकृतिक रंगो और पांरपरिक पैटर्न का प्रयोग होता हैं ,इस कला में प्रयुक्त बिंदुविन्यास, लयात्मक रेखाएँ और जैविक रूपाकार एक ऐसी दृश्य भाषा रचते हैं, जिसमें जीवन की निरंतरता, प्रकृति से सहअस्तित्व और जनजातीय संवेदनशीलता स्वाभाविक रूप से प्रकट होती है।। गोंड कला की विशेषता इसकें जीवत्र और रंग-बिरंगे चित्र हैं। चित्रों में रेखाओं और बिंदुओं की तकनीक से गहराई और गति दिखाई देती हैं। गोंड शिल्पकला में मिट्टी, लकड़ी और धातु सें बने उपकरण और सजावटी वस्तुएं शामिल हैं, जो उनके धर्मिक और सामजिक जीवन का हिस्सा है।

सांस्कृतिक अभिव्यक्ति – गोंड कला की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति सदियों पुरानी लोक-परंपराओं और आध्यात्मिक मान्यताओं पर आधारित है। गोंड जनजाति प्रकृति को ही अपना आधार मानती है, इसलिए उनकी कला में वृक्ष, पर्वत, पशु-पक्षी, जल और ब्रह्मांडीय आकृतियों का विशेष महत्व दिखता है। पारंपरिक रूप से यह कला सिर्फ सजावट का माध्यम नहीं थी, बल्कि हर चित्र एक कथा, एक विश्वास और एक सामाजिक स्मृति को संजोता था। पौराणिक कथाएँ, देवी-देवताओं के लोकरूप, जयसिंह वृक्ष, सर्प, हिरण और अन्य जीव उनकी कला का हिस्सा बनकर जनजातीय पहचान को जीवित रखते हैं।गोंड जनजाति की सांस्कृतिक उनके जीवन के घर पहलू में दिखती हैं। ये मुख्यतः कला, संगीत, नृत्य, कथाकथन. और लोकगीतों के माध्यमों से होती हैं। गोंड चित्रकला उनके धार्मिक विश्वासों, प्राकृतिक प्रतीको और सामाजिक जीवन का दर्पण हैं। गोंड कथा-कथन और लोककहानियां इनके उनके, इतिहास, आस्थाओं और जीवन मूल्यों को पीढ़ी-दर-पीढ़ी संचारत करती हैं। शिल्पकला और हस्तशिल्प भी उनकी सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का हिस्सा है, जो उनके जीवन और परंम्पराओ को दिखाते हैं। उस प्रकार, गोंड सांस्कृति उनके विश्वास, जीवन और समाज की जीवंत पहचान का प्रतिनिधित्व करती हैं।

तकनीकी आगमन और परिवर्तन-

गोंड कला सदियों तक अपनी पांरपरिक शैली, प्राकृतिक रंगों और मौखिक परंपराओं के सहारे आगे बढ़ती रहीं। पर जब 20 वीं सदी के अंत और 21 वीं सदी की शुरुआत में आधुनिक तकनीक और नए माध्यम आए, तो गोंड कला में बम पड़ा बदलाव आया । पहले यह कला केवल दीवारों तक सीमित थी, लेकिन अब कैनवास, एक्रेलिक रंगो, डिजिटल प्रिंट, सोशल मीडिया, आर्ट मार्केट और आधुनिक डिजाइन तकनीकों ने गोंड कला की दिशा ही बदल रही दी हैं। इसे तकनीक में आए बादलाव की तीन दृष्टियां हैं; जैसे-

माध्यमगत परिवर्तन- गोंड कला में सबसे बड़ा बदलाव तब आया जब आधुनिक तकनीक और नए माध्यम कलाकारों के संम्पर्क में आने लागें। पहले यह कला पूरी तरह से प्राकृतिक चीजों पर आधारित थीं। दीवारों ही मुख्य सतह होती थी, और रंग भी मिट्टी, पत्तों, फूलों और कोयले जैसे घरेलू स्त्रोतों से तैयार किए जाते थे, और ये सब स्त्रोत अपने आप में बहुत सुन्दर था, लेकिन इनसे बनी कला ज्यादा समय तक सुरक्षित नहीं रहती थी लेकिन इन कलाओं का लने समय तक जब तकनीक से जुड़े नए रंग। जैसे एक्रेलिक और फैब्रिक पेंट, उपलब्ध हुए, तो कलाकारों ने इन्हें अपनाना शुरू किया। इससे रंग लवे समय तक टिकने लगे और चित्र ज्यादा साफ और आकर्षक दिखाने लगें। वर्तमान समय मे कई कलाकार **कैनवास, और कागज के साथ-साथ कपड़ो** का भी उपयोग करते हैं, जिससे उनकी कला सुरक्षित रही हैं, और आसानी से कही भी ले जाई जा सकती हैं।तकनीक ने सिर्फ माध्यम ही नहीं बदले, बल्कि कलाकारों को डिजिटल साधनों से भी जोड़ा। अब टैबलेट व डिजिटल पेन से भी गोंड में चित्र बनाए जा रहे हैं। सोशाल मीडिया ने तो कलाकारो की दुनिया ही बदल दी हैं – पहले जहां कला केवल उनके गांव तक सीमित थी, आज वहीं कला ऑनलाइन जाकर गांव तक सीमित थी, आज देश व विदेश में लोगों तक पहुंचने लगी हैं। इससे कलाकारों को पहचान भी मिली और रोजगार के रास्ते भी खुलें। माध्यम में आए ये बदलाव गोंड कला को आधुनिक समय के साथ जोड़ते हैं, पर फिर भी इसकी मूल पहचान बनी रही रहती हैं।

शैलीगत परिवर्तन- तकनीक के आगमन से गोंड कला की शैली में काफी बदलाव आए हैं। पारंपरिक गोंड शैली में बिंदु (डाट्स), रेखाएं और लयात्मक पैटर्न प्रमुख थे। जिनका अपना सांस्कृतिक अर्थ था। इसके पीछे उद्देश्य “प्रकृति को सम्मान” और “जीवन की रक्षा” का संदेश देना था। लेकिन समय के साथ, गोंड कला की शैली में कई महत्वपूर्ण परिवर्तन देखने को मिल रहे हैं। आधुनिक तकनीक ने कलाकारों को अधिक समान रेखाएँ, महीन पैटर्न और डिजिटल टेक्सचर बनाने की सुविधा प्रदान की, जिससे चित्र अधिक सटीक और आकर्षक दिखने लगे।पांरपरिक गोड कला में सीमित रंगों का प्रयोग होता था-जैसे माला, सफेद, लाल व पीला; लेकिन अब कलाकार आधुनिक कलर स्कीम, ब्राइट टोन, शेडिंग एवं कलर – ब्लेडिंग तक का प्रयोग कर रहे हैं। कई आधुनिक कलाकारों पारंपरिक रूपांकनों को आधुनिक अभिव्यक्ति, एब्सट्रैक्ट फार्म और समकालीन संरचना के साथ जोड रहे हैं। डिजिटल माध्यम ने कलाकारों को एक ही डिजाइन को कई स्टाइल में प्रस्तुत करने की क्षमता दी हैं, जिससे शैलीगत प्रयोग और अधिक विस्तृत हो गए हैं। इस तरह तकनीक ने पारंपरिक शैली को बदले बिना उसमें आधुनिक सौन्दर्य को जोड़ा हैं।

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 01, No 08, PP 273-304 Nov. 2025 (Total PP 32)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly

विषयगत परिवर्तन- गोंड कला का विषय हमेशा प्रकृति, देवता देवकथाओं, पशु-पक्षी, वृक्ष और लोक-मान्यताओं पर आधारित रहा हैं। विषय सदियों तक लगभग समान रहें, क्योंकि उनका संबंध जीवन, आस्था और संस्कृति से था। परंतु तकनीक और आधुनिकता के प्रभाव ने कलाकारों को नए विषयों की ओर आकर्षित किया। आज कलाकार पर्यावरण संरक्षण, आधुनिक जीवन, सामाजिक मुद्दों, वन विनाश, जल संकट, महिला स्त्रीवाद की भूमिका, और व्यक्तिगत अनुभवों जैसे विषयों को चित्रित कर रहें।

डिजिटल माध्यम की पहुंच ने गोंड कलाकारों को वैश्विक मुद्दों और समकालीन संवेदनाओ से भी जोड़ दिया हैं। कलाकार शहरी जीवन, आधुनिककरण और तकनीकी बदलावों को भी अपने चित्रों में शामिल कर रहे हैं। पहले जहाँ कला केवल सांस्कृतिक प्रतीकों तक सीमित थी, अब उसमें कलाकार की व्यंकिगत सोच. समाज के प्रति दृष्टि और आलोचनात्मक विचार भी शमिल होने लगे। इससें गोंड कला अधिक विविध और अर्थपूर्ण बनी है।

आधुनिक दृष्टिकोण-

गोंड कलाकार पहले ही देशी रंगों से हटकर बाजार में आसानी से उपलब्ध कला सामग्री की ओर रुख कर चुके हैं।लेकिन 21वीं सदी में जब तकनीक ने समाज के हर क्षेत्र में अपनी उपस्थिति दर्ज कराई, तो इसका प्रभाव गोंड कला पर भी गहराई से दिखाई देने लगा। आज गोंड कलाकार न सिर्फ पारंपरिक रूपों को बचाए हुए हैं, बल्कि आधुनिक तकनीकों का उपयोग करके अपनी कला को नए माध्यम, नई शैली और वैश्विक पहचान दे रहे हैं। इस परिवर्तन को समझना इसलिए भी ज़रूरी है क्योंकि यह दिखाता है कि परंपरा और तकनीक मिलकर कैसे एक नया सांस्कृतिक-कलात्मक भविष्य तैयार कर सकती हैं। तकनीक ने गोंड कला की कार्य-प्रक्रिया (Process) में भी बड़ा परिवर्तन लाया है। पहले कलाकार कहानी सुनाते हुए हाथ से महीन रेखाएँ बनाते थे, अब यही रेखांकन डिजिटल पेन, टचस्क्रीन जैसे सॉफ्टवेयर में भी किया जा रहा है। इससे दो बड़े फायदे हुए

(1) कलाकार अपनी डिज़ाइन बिना खराब किए बार-बार सुधार सकते हैं।

(2) डिज़ाइन को कॉपी, सेव और एडिट करके नई संभावनाएँ निकाल सकते हैं।

इसके अलावा तकनीक ने सांस्कृतिक अभिव्यक्ति (Cultural Expression) को और गहरा बनाया है। ऐसा इसलिए क्योंकि अब कलाकार अपनी परंपरा को डिजिटल माध्यमों में संजो रहे हैं, जिससे वह आने वाली पीढ़ियों तक सुरक्षित रूप में पहुँच सके। कई गोंड कलाकार अपनी शैली को सिखाने के लिए ऑनलाइन क्लास, वीडियो ट्यूटोरियल और डिजिटल डॉक्यूमेंटेशन का सहारा ले रहे हैं। इससे कला न सिर्फ संरक्षित हो रही है बल्कि उसका ज्ञान भी फैल रहा है। तकनीक ने उनकी आवाज़ को एक ऐसा मंच दिया है जहाँ वे अपने सांस्कृतिक अनुभव, इतिहास, देवकथाएँ, और दुनिया देखने का अपना विशिष्ट तरीका साझा कर सकते हैं।

आधुनिक तकनीक का एक और सकारात्मक पहलू यह है कि यह आर्थिक अवसर (Economic Opportunity) भी बढ़ाती है। ऑनलाइन माध्यमों से कलाकार अपनी पेंटिंग, प्रिंट, डिजिटल आर्ट बेचने लगे हैं। इससे उनकी आजीविका मजबूत हुई है और कई युवा अब इस क्षेत्र को करियर के रूप में देखने लगे हैं। यह बदलाव दिखाता है कि तकनीक न सिर्फ कला को बदल रही है बल्कि कलाकार के जीवन को भी नया आयाम दे रही है।

हालाँकि, यह भी सच है कि तकनीक के कारण कुछ चुनौतियाँ भी सामने आई हैं—जैसे पारंपरिक शैली का कम होना, कॉपी किए गए डिज़ाइनों की समस्या, और आधुनिकता के कारण मौलिकता का संकट। लेकिन फिर भी, अधिकांश कलाकार इस बात से सहमत हैं कि तकनीक ने उनके लिए अवसर ज़्यादा खोले हैं और जोखिम कम किए हैं।

अंततः कहा जा सकता है कि गोंड कला में तकनीक का प्रवेश एक स्वाभाविक, रचनात्मक और आवश्यक बदलाव है। यह बदलाव परंपरा को मिटाता नहीं, बल्कि उसे आधुनिक रूप में प्रस्तुत करता है। आज गोंड कला अपने मूल स्वरूप—रेखा, बिंदु, कथा और प्रकृति—को बनाए रखते हुए डिजिटल युग में नई उड़ान भर रही है। इस तरह तकनीक ने न सिर्फ इस कला का सौंदर्य विस्तृत किया है, बल्कि उसकी सांस्कृतिक गहराई और विश्वव्यापी पहचान को भी मजबूत किया है।पारंपरिक कला की यह सीमाएँ थीं कि एक बार गलती हो जाए तो पूरा चित्र बिगड़ सकता था, मगर आज डिजिटल माध्यम की वजह से कलाकार के अंदर प्रयोगशीलता बढ़ी है। कई युवा गोंड कलाकार आज डिजिटल टूल्स की मदद से पुराने लोककथाओं को आधुनिक दृश्य भाषा में बदल रहे हैं।भारत और विदेशों में कई सरकारी इमारतों की दीवारों पर बड़े भित्ति चित्र हैं। गोंड चित्रों में साइकिल, हवाई जहाज, मोटरसाइकिल, जीप, बस और बंदूक जैसे नए रूपांकनों की उपस्थिति लोक चित्रकला की आधुनिकता और गतिशील प्रकृति का उदाहरण है। गोंड पेंटिंग अपनी मूल कैनवास शैली में व्यापक रूप से लोकप्रिय है, लेकिन परिधान, सहायक उपकरण या घरेलू सामान में नहीं। इसलिए, दुनिया अवसरों से भरी हुई है। यह पेंटिंग कपड़ों पर की जा सकती है, चाहे वह हाथ से हो या ब्लॉक प्रिंटिंग, डिजिटल प्रिंटिंग, हीट ट्रांसफर प्रिंटिंग या स्क्रीन प्रिंटिंग का उपयोग करके। पेंटिंग को पुनर्जीवित करने के लिए, सरकार इस क्षेत्र में कारीगरों को प्रशिक्षित कर सकती है। पारंपरिक गोंड पेंटिंग को उनकी सुंदरता बढ़ाने के लिए तकनीकी उपकरणों और तकनीकों का उपयोग करके बदल दिया गया है। यह मौजूदा बाजार में उपभोक्ताओं द्वारा उत्पाद की स्वीकृति में सहायता करेगा और कारीगरों को उनके घरों में ही रोजगार प्रदान करेगा।

Kalaa Samiksha - Volume 01, No 08, PP 273-304 Nov. 2025 (Total PP 32)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly

निष्कर्ष-

मध्य प्रदेश की गोंड जनजातीय कला में तकनीकी आगम का प्रभाव धीरे–धीरे एक ऐसी दिशा में विकसित होने लगा है, जहाँ पारंपरिक सौंदर्यबोध आधुनिक माध्यमों के साथ मिलकर एक नई अभिव्यक्ति का निर्माण करता है। गोंड कलाकारों द्वारा पहले प्राकृतिक रंग, मिट्टी, कोयला, देसी औजार और हस्तनिर्मित सतहों का प्रयोग किया जाता था, परंतु तकनीकी परिवेश बढ़ने के साथ माध्यमगत स्तर पर उनके कार्यों में ऐक्रेलिक रंग, फाइन लाइनर पेन, डिजिटल ड्राइंग टैबलेट, प्रिंटर आधारित प्रिंट–मेकिंग तथा ऑनलाइन माध्यमों का प्रयोग दिखाई देने लगा है। माध्यमगत परिवर्तन ने न केवल कला की टिकाऊ क्षमता को बढ़ाया है, बल्कि कलाकारों को बड़े आकार, सूक्ष्म रेखांकन और विस्तृत रंग–लेपन जैसी संभावनाएँ भी प्रदान की हैं। इन्हीं बदलावों के साथ चलिगत तकनीक में भी उल्लेखनीय परिवर्तन आया है, जहाँ पारंपरिक हाथ–चलित उपकरणों की जगह अब डिजिटल ब्रश, फोटो–एडिटिंग सॉफ्टवेयर, स्कैनर, प्रोजेक्शन आधारित रेखांकन और डिजिटल रिपीट पैटर्न तकनीक का उपयोग बढ़ा है। **आधुनिक तकनीक के समावेश** से न केवल संरक्षित हुई है बल्कि नई दिशा और वैश्विक मान्यता भी प्राप्त की है। डिजिटल पेंटिंग, प्रिंटिंग तकनीक और मिश्रित माध्यमों के प्रयोग ने पारंपरिक आकृतियों, रंगों और कथात्मक शैली को बनाए रखते हुए कला को नए स्वरूप में प्रस्तुत किया है। आधुनिक तकनीक के माध्यम से कलाकार सामाजिक, पर्यावरणीय और सांस्कृतिक विषयों को प्रभावी ढंग से अभिव्यक्त कर पा रहे हैं, जिससे गोंड कला पारंपरिक मिथकों और लोककथाओं के साथ समकालीन मुद्दों को भी जोड़ती है। तकनीकी नवाचार से कलाकारों को बिंदु, आकृति और रंग संयोजन को नए तरीके से प्रस्तुत करने की स्वतंत्रता मिली है, जिससे कला का आकर्षण बढ़ा और नई पीढ़ी को इसे सीखने और अपनाने के लिए प्रेरित किया गया है। यह स्पष्ट होता है कि पारंपरिक गोंड कला में आधुनिक तकनीक का समावेश केवल एक प्रयोग नहीं है, बल्कि सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पहचान दिलाने का महत्वपूर्ण माध्यम है। भविष्य में डिजिटल माध्यम, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस और मिश्रित तकनीक के प्रयोग से गोंड कला और अधिक समृद्ध और व्यापक रूप में प्रस्तुत की जा सकती है। इस प्रकार, पारंपरिक गोंड कला और आधुनिक तकनीक का संयोजन कला को पारंपरिक और समकालीन दृष्टिकोण दोनों से समृद्ध करता है और कलाकारों तथा दर्शकों दोनों के लिए एक सशक्त और प्रेरणादायक मंच प्रदान करता है।

संदर्भ ग्रन्थ-

1. एलविन वेरियर जनजातीय मिथक उड़िया आदिवासियो की कहानियाँ प्रकाशन राजकमल प्रकाशन प्रथम 2008
2. महावर निरंजन समग्र गोंड जनजातीय संस्कृतिक अध्ययन
3. समकालीन कला पत्रिका अंक 18 नवम्बर 2000
4. समकालीन कला पत्रिका अंक 38
5. डा. तिवारी प्रतिमा मध्य प्रदेश में गोंड जनजाति के लोगों का सांस्कृतिया महत्व और कला
6. डी. मोहन लाल जाट, जनजातीय चित्रकला पर खतरे, समकालीन कला अंक 44.45, ललित कला अकादमी प्रकाशन नई, दिल्ली
7. https://indianculture.gov.in/hi/paintings/gaonda-caitarakalaaen/gaonda-caitarakalaaen